ऋग्वेदका सुबोध भाष्य-

ऋषि दर्शन

[१] मधुच्छन्दा १) रु. [२] मेधातिथि २) रु. [३] शुनःशेष १) रु. [४] हिरण्यस्तूप १) रु. [५] कण्व २) रु. [६] सव्य १) रु. [७] नोधा १) रु. [८] पराशर १) रु. [९] गोतम २) रु. [१०] कुत्स २) रु. [११] त्रित १॥) रु. [१२] संवनन ॥) रु, [१३] हिरण्यगर्भ ॥) रु. [१४] नारायण १) रु. [१५] बृहस्पति १) रु. [१६] वागाम्भृणी ऋषिका १) रु. [१७] विश्वकर्मा १॥) रु. [१८] सप्तऋषि ।≈) रु.

ऋग्वेदानुक्रमणी, ऋगर्थदीपिका मू. ४) रु. डा. व्य. ।॥) रु.

ऋग्वेदके अग्निसूक्त

ऋग्वेदके अग्निसूक्तोंका मनन । मू. २) रु. डा. व्य. ॥)

यजुर्वेदका सुबोध भाष्य

अध्याय १ श्रेष्ठतम कर्मका आदेश १॥) रु.
,, ३६ सच्ची शांतीका सच्चा उपाय १॥) ,,
,, ४० आत्मज्ञान-ईशोपनिषद् २) ,,
,, ३२ एक ईश्वरकी उपासना
अर्थात् पुरुषमेध १॥) ,,

शतपथ-बोधामृत

शतपथके बोध-वचनोंका संग्रह । मू. ।≈) डा. व्य. ⁃)

केन उपनिषद् मू. १॥) रु. डा. व्य. ।≈)

मंत्री- स्वाध्यायमण्डल, 'किल्ला-पारडी (जि० सूरत)

अंक १२



संस्कृत-पाठ-माला।

(संस्कृत-भाषाका अध्ययन करनेका सुगम उपाय)

द्वादशो भागः।

लेखक

पं. श्रीपाद दामोदर सातवळेकर

स्वाध्याय-मंडल, पारडी, (जि० सूरत)

सप्तम वार

संवत् २००८, शके १८७४, सन १९५२

समास-विचार

संस्कृत-भाषामें समासोंका प्रयोग स्थानस्थानपर होता है। इसलिये संस्कृतभाषाका अध्ययन करनेवाले हरएक जिज्ञासुको समासोंके साथ परिचय करना आवश्यक है। इस पुस्तकमें अत्यंत सुगम रीतिसे सब प्रकारके समासोंके साथ पाठकोंका परिचय कराया है। इसलिये इस पुस्तकके अध्ययनसे पाठक उत्तम प्रकारसे समासोंके साथ परिचित हो सकते हैं। आशा है कि इसका उत्तम अध्ययन करके पाठक संस्कृत-भाषाके मंदिरमें प्रविष्ट हो जायँगे।

स्वाध्याय-मंडल,
'आनंदाश्रम'
पारडी (जि. सूरत)

लेखक
पं. श्रीपाद दामोदर सातवळेकर

मुद्रक और प्रकाशक—व० श्री० सातवळेकर, बी. ए.
भारत-मुद्रणालय, पारडी (जि. सूरत)



संस्कृत-पाठ-माला ।

द्वादश भाग ।

पाठ १

समास-प्रकरणम् ।

संस्कृत-भाषामें समासोंका प्रयोग बहुत होता है। इन समासोंके उदाहरण ये हैं—

समास	मूल-वाक्य	अर्थ
१ सूर्यकिरणः	(सूर्यस्य किरणः)	—सूर्यका किरण ।
२ वृक्षमूलम्	(वृक्षस्य मूलम्)	-वृक्षका मूल ।
३ तद्रूपम्	(तस्य रूपम्)	-उसका रूप ।

इन उदाहरणोंमें पाठक ध्यानसे देखेंगे तो उनको पता लग जायगा कि वाक्योंकाही संक्षिप्त रूप समास होता है। 'सूर्यस्य किरणः' इतना विस्तृत वाक्य बोलनेकी अपेक्षा 'सूर्यकिरणः' इतना कहने मात्रसेही संस्कृतमें कार्य होता है । समासों-द्वारा यह सुविधा होती है। ये समास छः प्रकारके हैं—

१ द्वंद्व, २ द्विगु, ३ तत्पुरुष, ४ कर्मधारय, ५ बहुव्रीहि और ६ अव्ययीभाव ।

अब इनका विवरण देखिए—

१ द्वंद्व- समासः ।

संस्कृत भाषामें द्वंद्व समासके दो भेद प्रचलित हैं।

१ इतरेतरयोग–द्वंद्वसमास, २ समाहार–द्वंद्वसमास ।

इतरेतरयोगका अर्थ यह है कि अन्यान्योंका संयोग । इसके उदाहरण देखिए—

१ रामकृष्णौ — (रामश्च कृष्णश्च)-राम और कृष्ण ।

२ रामलक्ष्मणभरतशत्रुघ्नाः- (रामश्च लक्ष्मणश्च भरतश्च शत्रुघ्नश्च)-राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न ।

३ स्त्रीपुरुषौ- (स्त्रीश्च पुरुषश्च) स्त्री और पुरुष ।

४ हरिहरौ- (हरिश्च हरश्च) हरि और हर ।

५ इन्द्रासोमौ- (इन्द्रश्च सोमश्च) इन्द्र और सोम ।

६ मातापितरौ-(माता च पिता च) माता और पिता।

७ शीतोष्णे- (शीतं च उष्णं च) शीत और उष्ण ।

यहां पाठक देख सकते हैं कि दो पदार्थोंका जहां संबंध होता है, वहां द्विवचन और तीन तथा तीनसे अधिक पदार्थोंके संबन्धके समय बहुवचन बनता है। यह द्वंद्वसमास बहुत सुगम है और वारंवार प्रयोगमें आता है। अब अगले पाठमें इसके वाक्य देखिये--

पाठ २

संस्कृत-वाक्यानि ।

१ तव मातापितरौ कुत्र गतौ ? २ मम मातापितरौ गृहं गतौ । ३ रामलक्ष्मणभरतशत्रुघ्नाः इदानीं किं कुर्वन्ति ? ४ रामलक्ष्मणभरतशत्रुघ्नाः इदानीं वनं गच्छन्ति । ५ गृहस्थाश्रमे स्त्रीपुरुषयोः संबंधः भवति ।

भाषा—वाक्य ।

१ तेरे मातापिता कहां गये ? २ मेरे मातापिता घर गये । ३ राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न अब क्या करते हैं ? ४ राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न अब वनको जाते हैं । ५ गृहस्थाश्रममें स्त्रीपुरुषोंका संबंध होता है ।

द्वंद्व—समासके दूसरे प्रकारका नाम ‘ समाहार-द्वंद्व’ है। इसमें संग्रह अथवा इकट्टा होनेका भाव रहता है और इसका प्रयोग एकवचनमें नपुंसकलिंगमें ही होता है। इसके उदाहरण ये हैं—

१ पाणिपादमुखम्-(पाणी च पादौ च मुखं च) हाथ, पांव और मुख इनका समुदाय ।

२ गवाश्वम्- (गावश्च अश्वाश्च) गौएं और घोडे ।

३ दासीदासम्-(दास्यश्च दासाश्च)-दासियां और दास।

४ शंखपटहम्—(शंखश्च पटहश्च) = शंख और ढोल।

५ गंगाशोणम्-(गंगा च शोणश्च) = गंगानदी और शोणनद ।

इस रीतिसे समुदाय अर्थमें नपुंसकलिंगमे एकवचनमें यह समास बनता है।

'च' शब्दका अर्थ'और'है। इस अर्थका संक्षेप इस द्वन्द्व समासमें होता है और इस चकारको हटानेसे यह समास बनता है। इतनाही इस विषयमें ध्यानमें धरना चाहिये, देखिये—

मूल—वाक्य	भाषामें अर्थ	द्वंद्व-समास
रामश्च रावणश्च-	(राम और रावण)	-रामरावणौ।
शिवश्च केशवश्च-	(शिव और केशव)	शिवकेशवौ ।
व्याघ्रश्च सिंहश्च-	(व्याघ्र और सिंह)	व्याघ्रसिंहौ ।

पाठक इस प्रकार द्वंद्व-समासका प्रयोग कर सकते हैं। क्योंकि यह सबसे सुगम समास है। समझनेके लिए और बनानेके लिए भी इसमें सुगमता है। और देखिए—

बालश्च वृद्धश्च—बालवृद्धौ ।

कोकिलश्च मयूरश्च-कोकिलमयूरौ ।

व्याघ्रश्च वराहश्च माहिषश्च-व्याघ्रवराहमहिषाः ।

कूपश्च तडागश्च-कूपतडागौ ।

वटश्च आम्रश्च- वटाम्रौ ।

वटश्च आम्रश्च पिप्पलश्च—वटाम्रपिप्पलाः ।

ब्राह्मणश्च क्षत्रियश्च- ब्राह्मणक्षत्रियौ ।

पाठ ३

द्विगु-समासः ।

जिस समासमें संख्यावाचक शब्द प्रथम स्थानमें होता है, प्रायः उसका नाम द्विगु-समास होता है । इस समासका साधारण लक्षण यही है, इसलिये इस समासको पहचानना अतिसुगम है और इसका बनाना भी सुगम है ।

इस समासके दो भेद हैं-(१) एकवद्भावी द्विगुसमास और (२) अनेकवद्भावी द्विगुसमास ।

एकवद्भावी द्विगुसमासः ।

१ त्रिशृंगम् (त्रयाणां शृंगाणां समाहारः) तीन सींगोंका समूह
२ पञ्चगवम् (पञ्चानां गवां समाहारः) पांच गौओंका समूह ।
३ पंचमूली-(पंचानां मूलानां समाहारः) पांच मूलोंका समूह
४ सप्तफली-(सप्तानां फलानां समाहारः) सात फलोंका समूह
५ अष्टाध्यायी--(अष्टानां अध्यायानां समाहारः)-आठ अध्यायोंका समूह ।

अनेकवद्भावी द्विगुसमासः ।

१ सप्तर्षयः-(सप्त च ते ऋषयश्च) सात ऋषि ।
२ चतुर्दिशः-(चतस्रः च ता दिशः) चार दिशाएं ।
३ त्रिलोकाः-(त्रयः च ते लोकाः) तीन लोक।

इस प्रकारके ये द्विगुसमास हैं और ये अत्यंत सुगम हैं। जिनके प्रारंभमें संख्यावाचक शब्द हैं, उनको द्विगु-समास समझना और उसको पूर्वोक्त प्रकार खोलना चाहिये।

संस्कृत-वाचन पाठः।

अभियाय च तं इंगुदीवृक्षं सभार्यः सलक्ष्मणः रामः रथात् अवातरत्। तत्र गुहः नाम निषादराजः तस्य सखा आसीत्। सः अपि रामं आगतं श्रुत्वा अमात्यैः वृद्धैः च परिवृतः तत्र रामं उपगतः। चीरवस्त्रधारी रामः सायं संध्यां तत्र उपास्य, लक्ष्मणेन आनीतं केवलं जलं एव भोजनार्थं आददे। वृक्षं आश्रित्य तत्रैव लक्ष्मणः तस्थौ। धनुर्धरः गुहः अपि सूतेन सह तत्रैव स्थितः।

जाकर उस इंगुदीवृक्षके पास पत्नीके साथ तथा लक्ष्मण के साथ राम रथसे उतर गया। वहां गुह नामक निषादोंका राजा उसका मित्र था। यह भी राम आया सुनकर मंत्रियों और वृद्धोंसे घेरा हुआ वहां रामके पास गया। वल्कलधारी रामने सायंसंध्या की। वहां उपासना करके लक्ष्मणका लाया हुआ केवल जलही भोजनके लिये लिया। वृक्षका आश्रय करके वहीं लक्ष्मण खडा रहा। धनुर्धारी गुह भी सूतके साथ वहीं रहा।

पाठ ४

१ प्रभातायां शर्वर्यां रामः उवाच 'तराम जाह्नवीं' इति। रामलक्ष्मणौ सीतया सह गंगां जग्मतुः । तं प्राञ्जलिः सूतः धर्मज्ञं रामं उवाच—' किं अहं इदानीं करवाणि' इति । रामः तं प्रत्युवाच 'राजानं अभिवाद्य ब्रूयाः । न अहं न च लक्ष्मणः अनुशोचति वनवासम् । चतुर्दशवर्षेषु निवृत्तेषु नः सर्वान् पुनरागतान् द्रक्ष्यसे' इति ।

'हे सुमंत्र ! राजानं मातरं कैकेयीं अन्याश्च देवीः पुनः पुनरुक्त्वा, अथ कौसल्यां सीताया मम लक्ष्मणस्य च वचनाद् आरोग्यं पादाभिवंदनं च ब्रूहि । कथय च । नाभिभविष्यति त्वां दुःखं अस्मत्संतापजं भरतश्च अपि वक्तव्यः यथा राजनि वर्तसे तथा सर्वासु मातृषु अविशेषतः वर्तेथाः ।' एवं सूतं पुनः पुनः सांत्वयित्वा, पश्चात् गुहं वचनं अब्रवीत्—

१ प्रभात काल होतेही राम बोला कि 'पार होंगे गंगाके' राम-लक्ष्मण सीताके साथ वहां गंगाके पास गये । हाथ जोड सूत धर्म जाननेवाले रामसे बोला कि 'क्या मैं अब करूं' रामने उसे उत्तर दिया-राजाको प्रणाम करके बोल कि न मैं और न लक्ष्मण वनवासका शोक करते हैं । चौदह वर्ष व्यतीत होनेपर हम सबको पुनः आये देखोगे ॥

'हे गुह ! इदानीं सजने वने मे वासः न योग्यः। अतः आनय न्यग्रोधक्षीरं'। इति; गुहः च राजपुत्राय तत् क्षिप्रं क्षीरं उपाहरत्। रामः अपि तेन जटाः अकरोत्। नदीतीरे स्थितां नावं दृष्ट्वा तत्र पूर्वं सीतां आरोप्य ततः स्वयं सलक्ष्मणः आरुरोह। ततः सा शुभा नौका शीघ्रं सलिलं अत्यगात्।

२ 'हे सुमंत्र ! राजासे, मातासे, कैकेयीसे, तथा अन्य देवियोंसे पुनः पुनः पूछकर और कौसल्याको सीताके, मेरे तथा लक्ष्मणके वचनसे कुशल पूछकर चरणवंदन कह। और कह-नहीं अधिक होगा तुझे दुःख हमारे कारण। भरतसे भी कह कि जैसा राजाके साथ बर्ताव करता है। वैसाही विशेषता छोडकर सब माताओंसे बर्ताव कर।' इस प्रकार सूतको पुनः पुनः शांत कर पश्चात् गुहसे भाषण बोला-

'हे गुह! अब मनुष्योंसे युक्त वनमें रहना मेरे लिये योग्य नहीं। मनुष्यरहित वनमें वास अवश्य करना है। इसलिये बडका दूध लाओ।' गुहने राजपुत्रके लिये शीघ्रही (बडका) दूध ला दिया। रामने भी उससे जटाएँ कीं। नदीतीरपर ठहरी नाव देखकर वहां पहले सीताको चढाकर पश्चात् स्वयं लक्ष्मणके साथ चढ लिया। पश्चात् वह उत्तम नौका शीघ्रही जलमें जाने लगी।

पाठ ५

संस्कृत-वाक्यानि ।

१ अन्यं तीरं संप्राप्य ते सर्वे नावं हित्वा प्रातिष्ठन्त । रामः तदा लक्ष्मणं आह—'सौमित्रे ! त्वं अग्रतः गच्छ, सीता त्वां अनुगच्छतु । अहं सीतां अनुपालयन् पृष्ठतः गच्छामि । अस्माभिः अन्योऽन्यस्य रक्षा कर्तव्या । वनवासस्य दुःखं वैदेही अद्य वेत्स्यति । '

भाषा-वाक्य ।

१ दूसरे पारको प्राप्त होकर वे सब नौकाको छोडकर चलने लगे । राम तब लक्ष्मणसे बोला-' हे लक्ष्मण ! तू आगे चल, सीता तेरे पीछे जावे । मैं सीताको पीछेसे पालन करता हुआ पीछेसे चलूंगा । हमने एक दूसरेकी रक्षा करनी है । वनवासका दुःख सीता आज जानेगी । '

२ रामः तां रात्रीं भरद्वाजाश्रमे सुखं अवसत् । प्रातः उत्थाय महर्षिं अभिवाद्य तौ अग्रे जग्मतुः । महर्षिश्च तेषां स्वस्त्ययनं चकार । तान् राज्ञः औरसान् पुत्रान् प्रस्थितान् प्रेक्ष्य चित्रकूटस्य रम्यं पंथानं आदिश्य, महर्षिः न्यवर्तत् । कालिन्दीं नदीं आसाद्य सद्यः तितीर्षवः चिन्तां आपेदिरे । ततः तौ राम-

लक्ष्मणौ काष्ठसंघाटं सुमहाप्लवं चक्रतुः । लक्ष्मणः सीतायाः सुखं आसनं चकार । तत्र रामः लज्जमानां तां सीतां प्लवं प्रथमं अध्यारोपयत् । पश्चात् स्वयं लक्ष्मणेन सह आरुह्य, अग्रे अगच्छत् ।

भाषा-वाक्य ।

२ राम उस रात्रीके समय भरद्वाजके आश्रममें सुखसे रहा । प्रातः उठकर महर्षिको प्रणाम कर वे (दो) आगे चलने लगे । महर्षिने भी उनका (स्वस्त्ययन) शुभ गमन होनेकी प्रार्थना की । उन राजाके औरस पुत्रोंको जाते देख, चित्र-कूटका रमणीय मार्ग बताकर महर्षि लौट आये । कालिंदी-नदीको प्राप्त हो तत्काल तैरनेकी इच्छा करनेवाले चिंताको प्राप्त हुए । पश्चात् वे राम-लक्ष्मण लकडियोंको जोड बडा बेडा करने लगे । लक्ष्मणने सीताके लिये सुख-कारक आसन बनाया । वहां रामने लज्जा करनेवाली उस सीताको बेडेपर पहले चढाया । पश्चात् स्वयं लक्ष्मणके साथ चढकर, आगे बढे ।

समासाः

१ सभार्यः—भार्यया सहितः ।

२ सलक्ष्मणः — लक्ष्मणेन सहितः ।

३ निषादराजः — निषादानां राजा ।

४ चीरवस्त्रधारी — चीरं च वस्त्रं च चीरवस्त्र, चीरवस्त्रे

धारयति इति चीरवस्त्रधारी ।

५ धनुर्धरः-धनुः धारयति इति ।

६ राम-लक्ष्मणौ–रामश्च लक्ष्मणश्च ।

७ वनवासः–वने वासः ।

८ चतुर्दशवर्षाणि – चतुर्दश च तानि वर्षाणि च ।

९ पादाभिवन्दनं – पादयोः अभिवंदनम् ।

१० अस्मत्संतापजं-अस्माकं संतापः अस्मत्संतापः, अस्मत्संतापात् जातम् ।

११ सजनम् – जनेन सहितं ।

१२ निर्जनम् – निर्गतः जनः यस्मात् ।

१३ राजपुत्रः – राज्ञः पुत्रः ।

१४ नदीतीरम् – नद्याः तीरम् ।

१५ भरद्वाजाश्रमः – भरद्वाजस्य आश्रमः ।

द्वंद्व-समास = रामलक्ष्मणौ, चीरवस्त्रे ।

द्विगु ,, = चतुर्दशवर्षाणि ।

इसी रीतिसे निम्न समासोंको खोलनेका यत्न कीजिये-

१ सपुत्रः । समित्रः । सवस्त्रः । सनेत्रः । सजलः ।

२ मनुष्यराजः । पशुपतिः । वनचरराजः । नक्षत्रेशः ।

३ शस्त्रधारी । अग्निधारी । वस्त्रधारी । कुशधारी ।

४ गृहवासः । जलनिवासः । कूपवासः । वृक्षनिवासः ।

पाठ ६

तत्पुरुष-समासः ।

तत्पुरुष-समासके आठ प्रकार हैं– १ प्रथमा-तत्पुरुष । २ द्वितीया तत्पुरुष। ३ तृतीया-तत्पुरुष। ४ चतुर्थी-तत्पुरुष। ५ पंचमी-तत्पुरुष । ६ षष्ठी-तत्पुरुष । ७ सप्तमी-तत्पुरुष । ८ नञ्तत्पुरुषः ।

इनके उदाहरण देखिये –

(१) प्रथमा – तत्पुरुषः ।

१ मध्याह्नः –(मध्यः अह्नः) – मध्यदिन ।

२ मध्यरात्रः – (मध्यः रात्रेः)– मध्यरात्री ।

३ प्राप्तजीविकः – (प्राप्तः जीविकां) जीविकाको प्राप्त।

(२) द्वितीया – तत्पुरुषः ।

१ ग्रामगतः –(ग्रामं गतः) ग्रामको गया हुआ ।

२ सुखप्राप्तः – (सुखं प्राप्तः) सुखको प्राप्त ।

३ दुःखातीतः – (दुःखं अतीतः) दुःखसे परे ।

(३) तृतीया – तत्पुरुषः ।

१ मातृसदृशः – (मात्रा सदृशः) – माताके सदृश ।

२ पितृसमः – (पिता समः) – पिताके समान ।

३ गुडसंमिश्रितः – (गुडेन संमिश्रितः) गुडसे मिश्रित ।

४ शस्त्राच्छिन्नः – (शस्त्रेण छिन्नः) शस्त्रसे छिन्नभिन्न ।

(४) चतुर्थी–तत्पुरुषः ।

१ यूपदारु— (यूपाय दारु) यूपके लिये लकडी ।
२ मुद्रिकासुवर्णं–(मुद्रिकायै सुवर्णं)-अंगूठीके लिये सुवर्ण।
३ भूतबलिः–(भूतेभ्यः बलिः)-प्राणियोंके लिये अन्न ।

(५) पंचमी–तत्पुरुषः ।

१ सिंहभयं—(सिंहात् भयं) सिंहसे डर ।
२ स्वर्गभ्रष्टः—(स्वर्गात् भ्रष्टः)-स्वर्गसे भ्रष्ट ।
३ दुःखमुक्तः–(दुःखात् मुक्तः)-दुःखसे मुक्त ।

(६) षष्ठी-तत्पुरुषः ।

१ राजपुरुषः—(राज्ञः पुरुषः)–राजाका पुरुष ।
२ वृक्षमूलं–(वृक्षस्य मूलं)--वृक्षका मूल ।
३ पृथिवीपतिः–(पृथिव्याः पतिः)–पृथ्वीका स्वामी ।
४ धर्मग्रंथः —(धर्मस्य ग्रंथः)— धर्मका ग्रंथ ।
५ देवपूजकः —(देवस्य पूजकः) देवका पूजक ।

(७) सप्तमी-तत्पुरुषः ।

१ व्यवहारधूर्तः —(व्यवहारे धूर्तः)— व्यवहारमें धूर्त ।
२ विद्याप्रवीणः —(विद्यायां प्रवीणः)— विद्यामें प्रवीण।
३ कलानिपुणः —(कलासु निपुणः) कलाओंमें निपुण ।
४ वाक्पटुः —(वाचि पटुः) भाषणमें प्रवीण ।

(८) नञ्तत्पुरुषः ।

१ अब्राह्मणः – (न ब्राह्मणः) – जो ब्राह्मण नहीं वह ।

२ अविद्वान् – (न विद्वान्) – जो विद्वान् नहीं वह ।

३ अशक्तः – (न शक्तः) – जो समर्थ नहीं वह ।

पाठक इतने तत्पुरुष समासोंके रूप देखकर जान सकते हैं कि प्रथमा, द्वितीया आदि विभक्तियोंके प्रत्यय समास खोलनेके समय लग जानेके कारणही उक्त समासोंको प्रथमा-तत्पुरुष, द्वितीया-तत्पुरुष आदि नाम प्राप्त हुए हैं ।

नञ्तत्पुरुषके समय नकारका अर्थ बतानेवाला अकार समासके प्रारंभमें लगता है ।

इतनी बातें ध्यानमें धरनेसे पाठक तत्पुरुष समासको पहचान सकते हैं । अब थोडा पढिये –

संस्कृत-वाचन-पाठः ।

रामः सीतां अब्रवीत्- वैदेहि ! सर्वान् नगान् पुष्पितान् पश्य । नरैः अनुपसेवितान् फलपुष्पैः च अवनतान् बिल्वान् भल्लातकान् पश्य । नूनं अत्र वयं शक्ष्याम आजीवितुम् । एष कोकिलः कूजति । शिखी तं प्रतिकूजति । पश्य इमं रम्यं चित्रकूटं यस्य काननेषु रंस्यामहे । इति । रम्यं चित्रकूटं आसाद्य तत्र वाल्मीकिं अभिवाद्य उपाविविशुः । महर्षिः तान्

पूजयामास । ततः रामः लक्ष्मणं अब्रवीत्, लक्ष्मण ! रुचिरं आवसथं कुरुष्व इति । लक्ष्मणः अपि पर्णशालां चक्रे । रामः स्नात्वा देवयजनं अकरोत्, विवेश च पर्णशालां । रम्यं चित्रकूटं, माल्यवतीं नदीं च आसाद्य राघवः ननन्द । पुरविप्रवासस्य दुःखं जहौ च ।

राम सीतासे बोला—हे सीते ! सब पर्वत पुष्पयुक्त हुए, देख । मनुष्योंद्वारा असेवित होनेसे फूलों और फलोंसे नमे हुए बिल्व और भिलावे देख । निश्चयसे यहां हम आजीविकाके लिये समर्थ होंगे । यह कोकिल शब्द करता है । मोर उसे जवाब देता है । देख इस रमणीय चित्रकूटको जिसके जंगलोंमें (हम) रममाण होंगे । ऐसे रमणीय चित्रकूटको प्राप्त होकर वहां वाल्मीकि ऋषिको प्रणाम कर (वे) बैठ गये । महर्षिने उनकी पूजा की । तब राम लक्ष्मणसे बोला, हे लक्ष्मण ! उत्तम घर बना । लक्ष्मणने भी पर्णशाला बनाई । रामने स्नान कर देवोंका यज्ञ किया और प्रवेश किया पर्णशालामें । रमणीय चित्रकूट और मलयवती नदीको प्राप्त होकर राम आनंदित हुआ । और (उसने) नगरसे बाहर होनेका दुःख दूर फेंक दिया ।

समासः ।

१ अनुपसेवितः-न उपसेवितः । २ फलपुष्पे-फलं च पुष्पं च ।

पाठ ७

अथ सुमंत्रः दुर्मना भूत्वा, निरानंदां अयोध्यां प्रययौ। अभिधावन्तः सहस्रशः नराः सुमंत्रं अभ्यद्रवन् पृच्छन्तः च 'क्व राम' इति। सीतारामलक्ष्मणाः गंगापारं गताः इति विज्ञाय च 'हा राम! हा राम!' इति विचुक्रुशुः। स वातायनगतानां स्त्रीणां च परिदेवनां शुश्राव। राजवेश्म प्रविश्य आतुरं राजानं अपश्यत्। यथोक्तं रामवचनं राजानं प्रणिपत्य प्रत्यवेदयत्। राजा तु तत् श्रुत्वा मूर्च्छितः भूत्वा भूमौ न्यपतत्। सर्वं अन्तःपुरं तदा आविद्धम्। रामे वनं प्रव्राजिते अथ षष्ठीं रजनीं अर्धरात्रे राजा पुनः पूर्वं

अब सुमंत्र दुःखी होकर आनंदरहित अयोध्याको चला। दौडते हुए सहस्रों मनुष्य सुमंत्रके पास पहुंचे और पूछने लगे कि 'कहां है राम?' ऐसा। सीता, राम और लक्ष्मण गंगाके पार गये ऐसा जानकर 'हा राम, हा राम' ऐसा रोने लगे। उसने खिडकियोंमें गई हुई स्त्रियोंका भी रोना सुना। राजघरमें प्रविष्ट हो दुःखी राजाको देखा। जैसा कहा था (वैसा) रामका भाषण राजासे प्रणाम कर कहा। राजा तो उसे सुन, भूमिपर गिरा। सब अंतःपुर तब दुःखी हुआ। राम वनको भेजे जानेपर छठी रात्रिको अर्ध रात्रिके समय राजाने फिर पूर्व-

कृतं दुष्कृतं अस्मरत् । कौसल्यां च अब्रवीत् । देवि ! यदा त्वं अनूढा अभवः अहं च युवराजः । तदा प्रावृट् समयः प्राप्तः । अतिसुखे तस्मिन् काले सरयूं नदीं अन्वगाम् । यद् अहं रात्रौ निपाने अभ्यागतं महिषं गजं मृगं वा हन्तुं लभेय इति । अंधकारे तु तदा वारणस्य इव जले नर्दतः घोषं अश्रौषम् । ततः गजप्रेप्सुः दीप्तं शरं उद्धृत्य अपातयम् । तदा कस्य अपि व्यक्ता वाक् प्रादुरासीत् ' कथं मद्विधस्य ऋषेः वधः विधीयते । न अहं मम जीवितक्षयं अनुशोचामि । अपि तु मातरं च पितरं च अनुशोचामि । ' श्रुत्वा तां करुणां

समय किया हुआ दुष्कर्म स्मरण किया । और कौसल्यासे बोला । हे देवि! जब तू अविवाहित थी और मैं युवराज था। तब वर्षाकाल प्राप्त हुआ था । अति सुखदायक उस कालमें सरयू नदीपर मैं गया । (इसलिये) कि मैं रात्रिके समय पानी पीनेके लिये आये हुए भैंसे, हाथी या हिरनको मारने के लिये प्राप्त करूं । अंधकारमें तो तब हाथीके जैसा जलमें शब्दका आवाज सुना । फिर हाथीकी इच्छा करनेवाले (मैंने) तेज बाण उठाकर छोड दिया। तब किसीकी स्पष्ट वाणी मैंने सुन ली । 'कैसे मेरे जैसे ऋषिका वध किया जाता है । नहीं मैं अपने जीवितके नाशके लिये शोक करता हूं, परंतु माता और पिताके लिये शोक करता हूं । ' सुन-

*

पाठ ८

वाचं व्यथितस्य मे कराभ्यां सशरं चापं भुवि अपतत् । दुर्मनाः तं देशं गत्वा तत्र इषुणा हतं तापसं अपश्यम् । स तापसः मां उवाच । 'मम पितुः अयं आश्रमः, इतः स्थानात् एकपदी एव केवलम् । त्वं तत्र गच्छ तं प्रसादय च । संकुपितः सः त्वां न शपेत् । मां च विशल्यं कुरु ।' ततः अहं बाणं उदहरम् । स तपोधनः सद्यः प्रणान् जहौ । अहं अपि यथा आख्यातं जल-पूर्णं घटं आदाय आश्रमपथं गतः । तत्र अहं अपश्यं तस्य वृद्धौ अन्धौ च पितरौ । मम पदशब्दं श्रुत्वा एव मुनिः अभाषत, 'किं पुत्र ! चिरयासि ? आनय क्षिप्रं

कर वही करुणामयी वाणी, दुःखी हुए मेरे हाथोंसे बाणसहित धनुष्य भूमिपर गिर गया । दुःखी बन, उस देशको जा, वहां बाणसे ताडित तापसीको देखा । वह तापस मुझसे बोला-'मेरे पिताका यह आश्रम इस स्थानसे एक कदम ही केवल है । तू वहां जा और उसे प्रसन्न कर। क्रोधित होनेपर वह तुझे शाप न दे । मुझे शल्यरहित कर ' तब मैंने (उसके शरीरसे) बाण निकाला । उस तपस्वीने उसी क्षण प्राण छोड दिये । मैंने भी जैसा कहा था, जलका घडा लेकर आश्रमके मार्गसे गया । तब मैंने देखा उसके दोनों अन्धे मातापिताको । मेरे पांवका शब्द सुनकरही मुनिने भाषण किया 'क्यों पुत्र ! देरी

पानीयम् । कथं न अभिभाषसे ! ' इति । तदा मया तस्य पुत्रस्य मरणं निवेदितम् । असौ तदा उवाच माम् ' नय नौ तं एव देशं तथाविधं पुत्रं द्रष्टुं इच्छावः । ' ततः अहं एकः सभार्यं मुनिं तत्र नीत्वा पुत्रं अस्पर्शयम् । तौ पुत्रं स्पृष्ट्वा अस्य शरीरे निपेततुः । स मुनिः शोकसंतप्तः तदा मां आह–' हे राजन् ! मे शापात् त्वं एवं पुत्रशोकेनैव कालं गमिष्यसि । ' एवं मां शापं दत्वा तत् मिथुनं स्वर्गं अगात् । अद्य तत् पापं मया इदानीं स्मृतम् । तस्य पापकर्मणः एव अयं विपाकः ।

करता है ? ला जलदी पानी। कैसे नहीं बोलता है ?' ऐसा । तब मैंने उसके पुत्रका मरण सुनाया । वह तब बोला मुझसे ' ले जा हम (दोनोंको उसी देश) को, वैसे पुत्रको देखनेकी इच्छा करते हैं। ' तब मैं अकेलेने पत्नीके समेत मुनिको वहां लेकर पुत्रसे स्पर्श कराया । वे (दोनों) पुत्रसे स्पर्श करके इसके शरीरमें गिरे । वह मुनि शोकसे संतप्त तब मुझे बोला- 'हे राजा ! मेरे शापसे तू इसी प्रकार पुत्रशोकसे मृत्युको प्राप्त होगा ।' इस प्रकार मुझे शाप देकर वह जोडा स्वर्गको गया । आज उस पापको मैंने अब स्मरण किया । उस पापकर्मकाही यह परिणाम है ।

समासः ।

द्वंद्व – -समास —सीतारामलक्ष्मणाः (सीता च रामश्च लक्ष्मणश्च)

तत्पुरुष--(नञ्तत्पुरुष) = (१) अयोध्या (न योध्या) । अनूढा (न ऊढा) । (तृतीया तत्पुरुष) = (१) शोकसंतप्तः (शोकेन संतप्तः) । (षष्ठीतत्पुरुष) = (१) गंगापारः (गंगायाः पारः) । (२) राजवेश्म (राज्ञः वेश्म) । (३) रामवचनं (रामस्य वचनं) । (४) जीवितक्षयः (जीवितस्य क्षयः)। (५) पदशब्दः (पादयोः शब्दः) (६)पुत्रशोकः (पुत्रस्य शोकः) । (सप्तमीतत्पुरुष) = (१) वातायनगता (वातायने गता)

१ पर्णशाला—पर्णानां शाला । २ देवयजनं-देवानां यजनं
३ पुरविप्रवासः— पुरात् वि-प्रवासः ।
निम्नलिखित समासोंको खोलनेका यत्न कीजिये-

द्वंद्वसमास—फलपुष्पे ।
नञ्तत्पुरुष—असेवितः ।
तृतीयातत्पुरुष—हरिकृतः ।
चतुर्थीतत्पुरुष—जनाहितम् ।
पञ्चमीतत्पुरुष—पत्रशाला । देवयजनं ।

पाठ ९

बहुव्रीहि-समासः।

बहुव्रीहि समासके मुख्य सात भेद हैं। (१) द्विपद बहुव्रीहिः, (२) बहुपद बहुव्रीहिः, (३) संख्योत्तरपद बहुव्रीहिः, (४) संख्योभयपद बहुव्रीहिः, (५) सहपूर्वपद बहुव्रीहिः, (६) व्यतीहारलक्षणो बहुव्रीहिः, (७) द्विगंतराललक्षणो बहुव्रीहिः।

द्विपद-बहुव्रीहिके भी फिर छः भेद हैं। इनके उदाहरण ये हैं-

(१) द्वितीया बहुव्रीहिः।

१ प्राप्तोदकः = प्राप्तं उदकं यं सः प्राप्तोदकः (ग्रामः) जिसे उदक प्राप्त हुआ है ऐसा ग्राम।

२ आरूढवानरः = आरूढ वानरः यं (वृक्षं) स आरूढवानरः (वृक्षः) = जिसपर वानर चढा है वह वृक्ष।

(२) तृतीया बहुव्रीहिः।

१ निर्जितकामः = निर्जितः कामः येन स निर्जितकामः (शंकरः) = काम पराजित किया है जिसने वह।

२ प्राप्तविद्यः = प्राप्ता विद्या येन। = प्राप्त की है विद्या जिसने।

३ जितशत्रुः = जिताः शत्रवः येन। = पराजित किये हैं शत्रु जिसने।

(३) चतुर्थी बहुव्रीहिः ।

१ उपनीतभोजनः = उपनीतं भोजनं यस्मै । = पास रखा है भोजन जिसके लिये ।

२ उपहृतधान्यः = उपहृतं धान्यं यस्मै । = लाया है धान्य जिसके लिये ।

(४) पंचमी बहुव्रीहिः ।

१ निष्क्रान्तजनः = निष्क्रान्तः जनः यस्मात् । = चला गया है मनुष्यमात्र जहांसे (वह ग्राम) ।

२ उद्धृतौदनः = उद्धृतः ओदनः यस्मात् । = उठा लिया है चावल जिससे (वह बर्तन) ।

३ समाप्तजलः = समाप्तं जलं यस्मात् । = समाप्त हुआ है जल जिससे (ऐसा कूआ) ।

(५) षष्ठी बहुव्रीहिः ।

१ शुक्लपटः = शुक्लः पटः यस्य । = श्वेत है वस्त्र जिसका ।

२ नीलांबरः = नीलं अम्बरं यस्य । = नीला है वस्त्र जिसका ।

३ लंबकर्णः = लंबौ कर्णौ यस्य । = लंबे हैं कान जिसके (वह गधा) ।

६ सप्तमी बहुव्रीहिः ।

१ वीरपुरुषः । वीराः पुरुषाः यस्मिन् । = वीर है

पुरुष जिसके (ऐसा ग्राम)।

२ संचितजलं = संचितं जलं यस्मिन् = इकट्ठा किया है जल जिसमें (ऐसा पात्र) ।

३ बहुजनः = बहवः जनाः यस्मिन् । = बहुत हैं लोग जिसमें (ऐसा नगर) ।

ये 'द्विपद-बहुव्रीहि' के उदाहरण हैं । बहुव्रीहिमें विलक्षणता यह है कि जो पद उस समासमें रहते हैं उनसे भिन्नही अन्य पदार्थका बोध उन शब्दोंसे होता है । जैसा 'पीतांबरः' शब्द है = (पीतं अंबरं यस्य) (पीतं) पीला है (अंबरं) वस्त्र जिसका वह पुरुष (कृष्ण, विष्णु आदि) पीतांबर शब्दसे बोधित होता है ।

यह विशेषता पाठक स्मरण रखें और पूर्वोक्त समासोंको पहचाननेका यत्न करें ।

संधि किये हुए वाक्य ।

नरैरनुपसेवितान्फलपुष्पैश्चावनतान् बिल्वान्—भल्लातकान्पश्य । नूनमत्र वयं शक्ष्यामाजीवितुम् । एष कोकिलः कूजति । शिखी तं प्रतिकूजति । पश्येमं रम्यं चित्रकूटं यस्य काननेषु रंस्यामहे । इति । रम्यं चित्रकूटमासाद्य तत्र वाल्मीकमभिवाद्योपविविशुः ।

पाठ १०

अब अन्य बहुव्रीहियोंके उदाहरण यहां देते हैं—

बहुपद-बहुव्रीहिः समासः ।

पूर्वोक्त द्विपद बहुव्रीहि समासमें केवल दोही पद होते हैं। परंतु इसमें दोसे अधिक पद होते हैं, और इससे भी समासमें दिखाई देनेवाले पदोंद्वारा उनसे भिन्न अन्य पदार्थकाही बोध होता है । जैसा—

१ पराक्रमोपार्जितसम्पत् = पराक्रमेण उपार्जिता संपद् येन सः पराक्रमोपार्जितसंपत् = पराक्रमद्वारा प्राप्त की है संपत्ति जिसने वह (पराक्रमी शूर पुरुष) ।

२ बाहुबलनिर्जितशत्रुः = बाहुबलेन निर्जिताः शत्रवः येन सः बाहुबलनिर्जितशत्रुः = अपने बाहुबलसे पराजित किये हैं शत्रु जिसने वह (बली मनुष्य) ।

३ अन्यायोपार्जितधनः = अन्यायेन उपार्जितं धनं येन सः अन्यायोपार्जितधनः = अन्यायके मार्गसे प्राप्त किया है धन जिसने वह (पापी मनुष्य) ।

इसी प्रकार अन्यान्य उदाहरण पूर्ववत् ही समझने चाहिये। आशा है कि इस रीतिसे इस समासको पाठक पहचान लेंगे। इसमें दो शब्दोंसे अधिक शब्द रहते हैं और सब शब्दों द्वारा अन्यही पदार्थका बोध होता है ।

संख्योत्तरपद बहुव्रीहिः समासः ।

इसमें दूसरा पद संख्यावाचक रहता है । इसका उदाहरण देखिये—

१ उपदशाः = उप समीपे दशानां सन्ति ये ते उपदशाः । = पास दस (पुरुषों) के हैं जो उनको उपदश कहते हैं ।

इसी प्रकार " २ उपविंश, ३ उपशत " आदि संख्योत्तरपद बहुव्रीहि समास होते हैं । इसके पश्चात् देखिये—

संख्योभयपद बहुव्रीहिः ।

इसमें दोनों पद संख्यावाचकही रहते हैं, जैसा—

१ द्वित्राः = द्वौ वा त्रयो वा = (दो वा तीन)

२ द्विदशाः = द्विरावृत्ता दश = (दोवार दश)

इस रीतिसे यह बहुव्रीहि समास होता है । इसके दोनों शब्द संख्यावाचक होते हैं । इस कारण इसकी पहचान अतिसुगम है । अब देखिये-

सहपूर्वपद-बहुव्रीहिः ।

इस बहुव्रीहिमें ' सह ' साथ, इस अर्थवाला शब्द प्रथम स्थानमें रहता है; जैसा-

१ समूलः = मूलेन सह वर्तते इति समूलः = मूलके साथ रहनेवाला ।

२ सपुत्रः = पुत्रेण सह वर्तते इति = लडकेके साथ रहता है जो । ३ सकेशः = केशैः सह भवति इति = बालोंके साथ होता है जो । ४ सखड्गः = खड्गेन सह आस्ति इति – तलवारके साथ होता है जो ।

ये इस प्रकारके समास अतिसुगम हैं क्योंकि इसमें प्रारंभमें ' स ' या ' सह ' इस प्रकारके शब्द रहते हैं। अस्तु । अब देखिए-

व्यतिहारलक्षणः बहुव्रीहिः ।

इसमें उलट, पुलट, क्रम अथवा बदलेका भाव रहता है; इसके उदाहरण ये हैं ।

१ केशाकेशि–केशेषु केशेषु गृहीत्वा यत् युद्धं प्रवृत्तं तत् केशाकेशि । – केशोंको पकडकर जो युद्ध होता है वह केशाकेशि है ।

२ दण्डदण्डि-दण्डैः दण्डैः प्रहृत्य यत् युद्धं प्रवृत्तं तत् दण्डादण्डि—लाठियों और सोटियोंके प्रहार कर जो युद्ध हुआ, उसका नाम दण्डादण्डि है ।

अब एक बहुव्रीहि शेष है उसका नाम है–

दिगन्तराललक्षणः बहुव्रीहिः ।

इसमें दिशाओंका अवकाश बताया जाता है, जैसा–

दक्षिणपूर्वा–दक्षिणस्याः पूर्वस्याश्च दिशोः यत् अंत-रालं सा दक्षिणपूर्वा । – दक्षिण और पूर्व दिशाओंमें जो अवकाश है उसका नाम ' दक्षिणपूर्वा ' है ।

ये सब सामास सुगम हैं, और पाठक यदि इस पाठका अभ्यास विचार और मननपूर्वक करेंगे तो उनको बहुव्रीहि समासका ज्ञान इतनेसे ठीक प्रकार हो सकता है; और उनको कोई कठिनता नहीं रहेगी।

संस्कृत-भाषामें बहुव्रीहि समासका उपयोग बहुत होता है। प्रयोगकी दृष्टिसे तत्पुरुष समास और बहुव्रीहि समासही बहुत प्रयुक्त होते हैं। इसलिये पाठकोंको उचित है कि वे इनका उत्तम अध्ययन करें और संस्कृतभाषाके मन्दिरमें सुगमतासे प्रविष्ट हों।

संधि किये हुए वाक्य।

महर्षिस्तान्पूजयामास। ततो रामो लक्ष्मणमब्रवीत् 'लक्ष्मण! रुचिरमावसथं कुरुष्वेति'। लक्ष्मणोऽपि पर्णशालां चक्रे। रामः स्नात्वा देवयजनमकरोत्। विवेश च पर्णशालाम्। रम्यं चित्रकूटं, माल्यवतीं नदीं चासाद्य राघवो ननन्द। पुरविप्रवासस्य दुःखं जहौ च। अथ सुमन्त्रो दुर्मना भूत्वा, निरानन्दामयोध्यां प्रययौ। अभिधावन्तः सहस्रशो नराः सुमंत्रमभ्यद्रवन् पृच्छन्तश्च 'क्व राम' इति। सीतारामलक्ष्मणाः गंगापारगता इति विज्ञाय च 'हा राम! हा राम!' इति विचुक्रुशुः। स वातायनगतानां स्त्रीणां च परिदेवनां शुश्राव।

पाठ ११

इस पाठमें पूर्व पाठोंमें दी हुई रामायणकी कथाका संधियुक्त सरल संस्कृत दिया जाता है। यदि पाठकोंके पूर्व पाठ बन गये हों, तो इस पाठके समझनेमें उनको कोई कठिनता नहीं रहेगी।

(१)

अभियाय च तमिंगुदीवृक्षं सभार्यः सलक्ष्मणो रामो रथादवातरत्। तत्र गुहो नाम निषादराजस्तस्य सखाऽऽसीत्। सोऽपि राममागतं श्रुत्वाऽमात्यैर्वृद्धैश्च परिवृतस्तत्र राममुपगतः। चीरवस्त्रधारी रामः सायं-संध्यां तत्रोपास्य लक्ष्मणेनानीतं केवलं जलमेव भोजनार्थमाददे। वृक्षमाश्रित्य तत्रैव लक्ष्मणस्तस्थौ। धनुर्धरो गुहोऽपि सूतेन सह तत्रैव स्थितः। प्रभा-तायां शर्वर्यां राम उवाच— 'तराम जान्हवीं' इति रामलक्ष्मणौ सीतया सह गंगां जग्मतुः। प्राञ्जलिः सूतो धर्मज्ञं राममुवाच— 'किमहमिदानीं करवाणि' इति। रामस्तं प्रत्युवाच- 'राजानमभिवाद्य ब्रूयाः। नाहं न च लक्ष्मणोऽनुशोचति वनवासम्। चतुर्दशवर्षेषु निवृत्तेषु नः सर्वान् पुनरागतान्द्रक्ष्यसे' इति ॥

'हे सुमंत्र ! राजानं मातरं कैकेयीमन्याश्च देवीः पुनः पुनरुक्त्वा, अथ कौसल्यां सीताया मम लक्ष्मणस्य च वचनादारोग्यं पादाभिवंदनं च ब्रूहि। कथय च। नाभिभविष्यति त्वां दुःखमस्मत्संतापजम्। भरतश्चापि वक्तव्यो 'यथा राजनि वर्तसे तथा सर्वासु मातृष्वविशेषतो वर्तेथाः।' एवं सूतं पुनः पुनः सांत्वयित्वा पश्चाद्गुहं वचनमब्रवीत्- 'हे गुह ! इदानीं सजने वने मे वासो न योग्यः। निर्जने वने वासोऽवश्यं कर्तव्यः। अत आनय न्यग्रोधक्षीरम्' इति। गुहश्च राजपुत्राय तत् क्षिप्रं क्षीरमुपाहरत्। रामोऽपि तेन जटा अकरोत्। नदीतीरे स्थितां नावं दृष्ट्वा तत्र पूर्वं सीतामारोप्य ततः स्वयं सलक्ष्मण आरुरोह। ततः सा शुभा नौका शीघ्रं सलिलमत्यगात्। अन्यं तीरं संप्राप्य ते सर्वे नावं हित्वा प्रातिष्ठन्त। रामस्तदा लक्ष्मणमाह- 'सौमित्रे त्वमग्रतो गच्छ, सीता त्वामनुगच्छतु। अहं सीतामनुपालयन् पृष्ठतो गच्छामि। अस्माभिरन्योऽन्यस्य रक्षा कर्तव्या। वनवासस्य दुःखं वैदेह्यद्य वेत्स्यति।'

रामस्तां रात्रीं भरद्वाजाश्रमे सुखमवसत् प्रातरुत्थाय महर्षिमभिवाद्य तावग्र जग्मतुः। महर्षिश्च तेषां स्वस्त्ययनं चकार। तान्राज्ञ औरसान्पुत्रान्प्रस्थता-

न्प्रेक्ष्य, चित्रकूटस्य रम्यं पंथानमादिश्य महर्षिर्न्यवर्तत । कालिंदीं नदीमासाद्य सद्यस्तितीर्षवश्चिन्तामापेदिरे । ततस्तौ रामलक्ष्मणौ काष्ठसंघाटं सुमहाप्लवं चक्रतुः । लक्ष्मणः सीतायाः सुखमासनं चकार । तत्र रामो लज्जमानां तां सीतां प्लवं प्रथममभ्यारोपयत् । पश्चात्स्वयं लक्ष्मणेन सहारुह्य, प्लवमुत्सृज्य, अग्रेऽगच्छत् ।

(२)

रामः सीतामब्रवीत् ' वैदेहि ! सर्वान्नगान्पुष्पितान्पश्य । नरैरनुपसेवितान्फलपुष्पैश्चावनतान्बिल्वान्भल्लातकान्पश्य । नूनमत्र वयं शक्ष्यामाजीवितुम् । एष कोकिलः कूजति । शिखी तं प्रतिकूजति । पश्येमं रम्यं चित्रकूटं यस्य कानने‌षु रंस्यामहे ' इति । रम्यं चित्रकूटमासाद्य तत्र वाल्मीकमभिवाद्योपविविशुः महर्षिस्तान्पूजयामास । ततो रामो लक्ष्मणमब्रवीत् ' लक्ष्मण ! रुचिरमावसथं कुरुष्वेति । ' लक्ष्मणोऽपि पर्णशालां चक्रे । रामः स्नात्वा देवयजनमकरोद्विवेश च पर्णशालाम् । रम्यं चित्रकूटं,माल्यवतीं नदीं चासाद्य राघवो ननन्द । पुरविप्रवासस्य दुःखं जहौ च ।

पाठ १२

अथ सुमंत्रो दुर्मना भूत्वा, निरानंदामयोध्यां प्रययौ। अभिधावन्तः सहस्रशो नराः सुमंत्रमभ्यद्रवन्पृच्छन्तश्च ' क्व राम ' इति। सीतारामलक्ष्मणा गंगापारं गता इति विज्ञाय च ' हा राम, हा राम ' इति विचुक्रुशुः। स वातायनगतानां स्त्रीणां च परिदेवनां शुश्राव। राजवेश्म प्रविश्यातुरं राजानमपश्यत्। यथोक्तं रामवचनं राजानं प्रणिपत्य प्रत्यवेदयत्। राजा तु तच्छ्रुत्वा मूर्च्छितो भूत्वा भूमौ न्यपतत्। सर्वमन्तःपुरं तदाऽऽविद्धम्। रामे वनं प्रव्राजितेऽथ षष्ठीं रजनीं अर्धरात्रे राजा पुनःपूर्वं कृतं दुष्कृतमस्मरत्। कौसल्यां चाब्रवीत्। ' देवि ! यदा त्वमनूढाऽभवोऽहं च युवराजः, तदा प्रावृट्समयः प्राप्तः। अतिसुखे तस्मिन्काले सरयूं नदीमहमन्वगाम्। यदहं रात्रौ निपानेऽभ्यागतं महिषं गजं मृगं वा हन्तुं लभेयेति। अंधकारे तु तदा वारणस्येव जले नर्दतो घोषमश्रौषम्। ततो गजप्रेप्सुर्दीप्तं शरमुद्धृत्यापातयम्। तदा कस्यापि व्यक्ता वाक्प्रादुरासीत्–'कथं मद्विधस्यर्षेर्वधो विधीयते? नाहं मम जीवितक्षयमनुशोचामि। अपि तु मातरं च पितरं चानुशोचामि।' श्रुत्वा तां करुणां वाचं व्यथितस्य मे कराभ्यां सशरं चापं भुव्यपतत्। दुर्मनास्तं देशं गत्वा तत्रेषुणा

हतं तापसमपश्यम्। स तापसो मामुवाच-'मम पितुरयमाश्रमः इतः स्थानादेकपद्येव केवलम्। त्वं तत्र गच्छ तं प्रसादय च। संकुपितः स त्वां न शपेत्। मां च विशल्यं कुरु' ततोऽहं बाणमुदहरम्। स तपोधनः सद्यः प्राणाञ्जहौ। अहमपि यथाख्यातं जलपूर्णं घटमादायाश्रमपथं गतः। तत्राहमपश्यं तस्य वृद्धावन्धौ च पितरौ। मम पदशब्दं श्रुत्वैव मुनिरभाषत-'किं पुत्र! चिरयासि? आनय क्षिप्रं पानीयम्। नाभिभाषसे? इति।' तदा मया तस्य पुत्रस्य मरणं निवेदितम्। असौ तदोवाच माम्। 'नय नौ तमेव देशं तथाविधं पुत्रं द्रष्टुमिच्छावः।' ततोऽहमेकः सभार्यं मुनिं तत्र नीत्वा पुत्रमस्पर्शयम्। तौ पुत्रं स्पृष्ट्वाऽस्य शरीरे निपेततुः। स मुनिः शोकसंतप्तस्तदा मामाह—'हे राजन्! मे शापात्त्वमेवं पुत्रशोकेनैव कालं गमिष्यसि।' एवं मां शापं दत्त्वा तन्मिथुनं स्वर्गमगात्। अथ तत्पापं मयेदानीं स्मृतम्। तस्य पापकर्मण एवायं विपाकः।'

पाठक इसका अभ्यास विशेष रीतिसे करें और कोई कठिनता उत्पन्न हुई, तो पूर्वपाठ देखें।

---:o:---

पाठ १३

कर्मधारय-समासः ।

कर्मधारय-समासके सात भेद हैं, इनके नाम और उदाहरण यहां देते हैं—

(१) विशेषणपूर्वपद-कर्मधारयः ।

इसमें पहिला शब्द विशेषण होता है और दूसरा पद विशेष्य होता है, जैसा—

१ कृष्णसर्पः--(कृष्णश्च असौ सर्पश्च) = काला सांप ।
२ नीलवस्त्रं-(नीलं च तत् वस्त्रं च) = नीला वस्त्र ।
३ उष्णजलं-(उष्णं च तत् जलं च) = गर्म जल ।
४ शीतोदकं-(शीतं च तत् उदकं च) = शीत जल ।

इसमें क्रमशः " कृष्ण, नील, उष्ण, शीत ये " ये शब्द गुणबोधक होनेसे विशेषण हैं और ये क्रमशः ' सर्प, वस्त्र, जल, उदक ' इन शब्दोंके गुण बता रहे हैं, इसलिये ये विशेष्य हैं । इस प्रकार इस समासको पहचानना अति सुगम है ।

(२) विशेष्यपूर्वपद-कर्मधारयः ।

पूर्वोक्त समासके विरुद्ध अवस्था इसमें होती है । इसमें विशेष्य प्रथम होता है और विशेषण आगे रहता है अर्थात् पहिला शब्द विशेष्य और दूसरा विशेषण होता है और

*

विशेषणका शब्द पहिले शब्दकी निंदा करनेके लिए प्रयुक्त हुआ होता है, जैसा—

१ वीरभीतः(वीरश्चासौ भीतश्च)-वीर होकर घबराया हुआ।

२ धनेशार्थहीनः·(धनेशश्च असौ अर्थहीनश्च) -धनेश होकर द्रव्यहीन।

ये इसके उदाहरण हैं। इसमें दूसरे शब्दद्वारा पहिले की निंदा हुई है।

(३) विशेषणोभयपद-कर्मधारयः।

इसमें दोनों शब्द विशेषणही होते हैं, जैसा—

१ शीतोष्णं (शीतं च तत् उष्णं च)-शीत और उष्ण

२ कृष्णशुक्लः·(कृष्णश्च असौ शुक्लश्च) काला और श्वेत।

इस प्रकारके इस समासके उदाहरण हैं। इसमें सब शब्द विशेषणरूप होनेसे इसकी पहचान सुगम है।

(४) उपमानपूर्वपद-कर्मधारयः।

इसमें उपमा दर्शानेवाला शब्द प्रथम स्थानमें होता है। इसके उदाहरण ये हैं।

१ शंखपांडुरः--(शंखवत् पांडुरः)-शंखके समान श्वेत।

२ घनश्यामः—(घन इव श्यामः) मेघके समान श्याम।

३ मेघश्यामः—(मेघ इव श्यामः)—

इसमें पहिला शब्द उपमादर्शक और दूसरा गुणबोधक है।

पाठ १४

(५) उपमानोत्तरपद-कर्मधारयः ।

इसमें उपमादर्शक शब्द दूसरे स्थानमें रहता है, जैसे-

१ पुरुषव्याघ्रः-(पुरुषः व्याघ्र इव)-बाघके समान पुरुष।

२ नरसिंहः-(नरः सिंह इव)-सिंहके समान नर।

इस प्रकारके समासोंमें उपमादर्शक शब्द दूसरे स्थानमें रहते हैं । यहां पाठक पूर्व समासके साथ इसका भेद देखें और उसका स्मरण रखें ।

(६) संभावनापूर्वपद-कर्मधारयः ।

इसके उदाहरण ये हैं -

१ गुणबुद्धिः -(गुण इति बुद्धिः)- गुण जैसी बुद्धि ।

२ पुत्रग्रहणं-(पुत्र इति ग्रहणं) = पुत्र करके ग्रहण करना ।

(७) अवधारणापूर्वपद-कर्मधारयः ।

इसके उदाहरण ये हैं -

१ विद्याधनं-(विद्या एव धनं) = विद्याही धन है ।

२ सुहृद्बन्धुः-(सुहृत् एव बन्धुः) = मित्रही भाई है ।

इतने उदाहरण और इतनेभेद देख पाठकोंकी समझमें यह बात आगई होगी कि अर्थके अनुसारही समास बनते हैं और अर्थके अनुसारही समासोंकी पहचान होती है । यदि किसीको यह ज्ञान नहीं है, कि ' विद्याधन ' का अर्थ क्या है, तो वह उस समासको जानही नहीं सकेगा । अर्थात् संस्कृत भाषा

के अंदर जैसा पाठकोंका प्रवेश होता जायगा, वैसा वैसा उनको समासोंका अधिकाधिक बोध होता जायगा। पाठक यहां स्मरण रखें कि यह बात एक दूसरेके आश्रयपर निर्भर है। अर्थात् समासोंका ज्ञान होनेसे अर्थज्ञान हो जाता है और अर्थज्ञान होनेसे भी समासोंके खोलनेकी विधि ज्ञात हो सकती है ।

अब इस पाठमें निम्नलिखित श्लोक पढिये --

स्कंद उवाच-

मातरो हि भवत्यो मे भवतीनामहं सुतः ।
उच्यतां यन्मया कार्यं भवतीनामथेप्सितम् ॥१५॥
(म० भारत. वन. २३०)

अन्वयः-हि भवत्यः मे मातरः, अहं भवतीनां सुतः । अथ भवतीनां ईप्सितं मया यत् कार्यं उच्यताम् ॥

अर्थ-क्योंकि आप मेरी माताएं हैं, मैं आपका पुत्र हूं । आपको (ईप्सितं) इष्ट जो कार्य मुझे करना हो, वह कहिये ।

इन्द्रो दधाति भूतानां बलं तेजः प्रजाः सुखम् ।
तुष्टः प्रयच्छति तथा सर्वान्कामान्सुरेश्वरः ॥ १६ ॥
(म० भारत वन २२९)

अन्वयः-इन्द्रः भूतानां बलं तेजः सुखं प्रजाः दधाति । तथा तुष्टः सुरेश्वरः सर्वान् कामान् प्रयच्छति ॥

अर्थ--इन्द्र भूतमात्रके लिये बल, तेज, संतान, सुख धारण करता है, तथा वही सुरोंका ईश्वर इन्द्र संतुष्ट हुआ तो सब मनोरथोंको देता है ॥

ब्रह्म क्षत्रेण संसृष्टं क्षत्रं च ब्रह्मणा सह ।
उदीर्णे दहतः शत्रून्वनानीवाग्निमारुतौ ॥ १० ॥

(म. भारत. वन२६)

अन्वयः-ब्रह्म क्षत्रेण संसृष्टं, क्षत्रं च ब्रह्मणा सह (संमिलितं), उदीर्णे शत्रून् दहतः, अग्निमारुतौ वनानि इव ॥

अर्थ-(ब्रह्म) ब्राह्मण लोग (क्षत्रेण) क्षत्रिय लोगोंके साथ मिले हुए, तथा क्षत्रिय लोग ब्राह्मणोंके साथ संमिलित हुए तो, ये दोनों (उदीर्णे) प्रकाशित होकर शत्रुओंको ऐसे जलाते हैं, जैसे अग्नि और वायु मिलकर वनोंको जलाते हैं ।

यहां अग्नि शब्द ब्राह्मणका तेज और वायु शब्द क्षत्रियके बलका द्योतक है । वेदमंत्रोंमें अग्नि-देवताके मंत्रोंसे ब्राह्मणोंका वर्णन तथा वायुदेवताके मंत्रोंसे क्षत्रियोंका वर्णन हुआ है । इस विषयका अनुसंधान पाठक यहां करें।

समासाः ।

सुरेश्वरः-(सुराणां ईश्वरः) = देवोंका राजा ।
अग्निमारुतौ = अग्निश्च मारुतश्च ।
संसृष्टं = सम्यक् सृष्टं ।

पाठ १५

अव्ययीभाव-समासः ।

अव्ययीभाव समासके दो भेद हैं । एकका नाम (१) नामपूर्वपद अव्ययीभाव समास और (२) दूसरेको अव्यय पूर्वपद अव्ययीभाव समास कहते हैं । इनके उदाहरण हैं—

(१) नामपूर्वपद अव्ययीभाव-समासः ।

इस समासमें पहिला पद नाम होता है और दूसरा अव्यय होता है। देखिए—

१ फलप्रति – (फलस्य मात्रा) = फलका अंश ।

२ शाकप्रति–(शाकस्य मात्रा) शाकका प्रमाण ।

इन समासोंमें पहिला पद-'फल' अथवा 'शाक' ये नाम हैं, इसलिये इन समासोंका यह नाम है ।

(२) अव्ययपूर्वपद-अव्ययीभाव-समासः ।

इस समासमें पहिला पद अव्यय होता है और दूसरा नाम होता है। इसके उदाहरण ये हैं—

१ उपकुम्भं-(कुंभस्य समीपे वर्तते इति) = कुंभके पास रहता है ।

२ यथाक्रमं-(क्रमं अनतिक्रम्य वर्तते इति) = क्रमको न छोडकर रहता है।

३ अनुवनं-(वनस्य समीपं इति) = वनके पास रहता है।

यह समास संस्कृतभाषामें बहुतही प्रचलित है और स्थान स्थानमें इसका प्रयोग होता है। पहचाननेके लिये यह अत्यंत सुगम है। पाठक थोडासा ध्यान देंगे, तो उनको इसकी पहचान हो सकती है।

अब इस पाठमें निम्नलिखित श्लोकोंका अभ्यास कीजिए-

वैशम्पायन उवाच—

निहते राक्षसे तस्मिन्पुनर्नारायणाश्रमम् ।
अभ्येत्य राजा कौन्तेयो निवासमकरोत्प्रभुः ॥ १ ॥

(म. भारत. वन. १५९)

संस्कृत-टीका-तस्मिन् राक्षसे असुरे निहते निःशेषेण हते, पुनः पश्चात् कौन्तेयः कुंतीनंदनः प्रभुः राजा युधिष्ठिरः नारायणाश्रमं नारायणस्य आश्रमं प्रति अभ्येत्य आगत्य तत्रैव निवासं वास्तव्यं अकरोत् ।

स समानीय तान्सर्वान्भ्रातॄनित्यब्रवीद्वचः ।
द्रौपद्या सहितान् काले संस्मरन्भ्रातरं जयम् ॥२॥

संस्कृत-टीका-स तान् सर्वान् निखिलान् भ्रातॄन् द्रौपद्या सहितान् द्रौपद्या युक्तान् बंधून् समानीय सम्यक् आनीय काले समये भ्रातरं जयं विजयं अर्जुनं संस्मरन् इति वचः अब्रवीत् ।

पाठ १६

समाश्वतस्रोऽभिगताः शिवेन चरतां वने ।
कृतोद्देशः स बीभत्सुः पंचमीमभितः समाम् ॥ ६ ॥

संस्कृत-टीका-शिवेन सुखेन वने चरतां विचरतां अस्माकं चतस्रः समाः अभिगताः चत्वारि वर्षाणि व्यतीतानि । सः बीभत्सुः अर्जुनः पंचमीं समां पंचमं संवत्सरं वर्षं अभितः सर्वतः कृतोद्देशः, कृतः उद्देशः येन सः, पंचमे वर्षे आगमिष्यामि इति अर्जुनेन उक्तं आस्ति इति आशयः ।

प्राप्य पर्वतराजानं श्वेतं शिखरिणां वरम् ।
पुष्पितैर्द्रुमषण्डैश्च मत्तकोकिलषट्पदैः ॥ ४ ॥
मयूरैश्चातकैश्चापि नित्योत्सवविभूषितम् ।
व्याघ्रैर्वराहैर्महिषैर्गवयैर्हरिणैस्तथा ॥ ५ ॥
श्वापदैर्व्यालरूपैश्च रुरुभिश्च निषेवितम् ।
फुल्लैः सहस्रपत्रैश्च शतपत्रैस्तथोत्पलैः ॥ ६ ॥
प्रफुल्लैः कमलैश्चैव तथा नीलोत्पलैरपि ।
महापुण्यं पवित्रं च सुरासुरनिषेवितम् ॥ ७ ॥
तत्रापि च कृतोद्देशः समागमदिदृक्षुभिः ।
कृतश्च समयस्तेन पार्थेनामिततेजसा ॥ ८ ॥
पंचवर्षाणि वत्स्यामि विद्यार्थीति पुरा मयि ।
अत्र गांडीवधन्वानमवाप्तास्त्रमरिंदमम् ॥ ९ ॥

देवलोकादिमं लोकं द्रक्ष्यामः पुनरागतम् ।
इत्युक्त्वा ब्राह्मणान्सर्वानामन्त्रयत पांडवः ॥ १० ॥
(म. भा० वन० अ० १५८)

पुष्पितैः द्रुमषण्डैः द्रुमाणां वृक्षाणां षण्डैः खंडैः मत्तकोकिलषट्पदैः मत्तैः कोकिलैः षट्पदैः भ्रमरैः मयूरैः चातकैः एवैः पक्षिभिः नित्योत्सवविभूषितं नित्योत्सव इव विभूषितं शोभितं, व्याघ्रैः वराहैः सूकरैः महिषैः गवयैः हरिणैः तथा अन्यैः व्यालरूपैः भयानकैः श्वापदैः पशुभिः रुरुभिः रुरुनामकैः मृगविशेषैः निषेवितं निःशेषेण यथा भवति तथा सेवितं, फुल्लैः उत्फुल्लैः प्रफुल्लैः सहस्रपत्रैः शतपत्रैः उत्पलैः कमलैः प्रफुल्लैः कमलैः च तथा एव नीलोत्पलैः नीलकमलैः युक्तं सुरासुरनिषेवितं सुरैः असुरैः च निषेवितं, पवित्रं शुद्धं, महापुण्यं अतिपुण्यकरं, शिखरिणां शिखरयुक्तानां पर्वतानां वरं श्रेष्ठं, श्वेतं शुभ्रं, पर्वतराजानं पर्वतानां राजानं हिमाचलं प्राप्य: समागमदिदृक्षुभिः समागमं द्रष्टुं इच्छद्भिः तत्र अपि कृतोद्देश कृतवासः, अर्जुनस्य समागमं दिदृक्षुभिः अस्माभिः अत्र एव वासः कर्तव्यः तेन अमिततेजसा अपरिमिततेजसा पार्थेन पृथापुत्रेण अर्जुनेन पुरा मयि समयः निश्चयः कृतः यतः विद्यार्थी भूत्वा पञ्च वर्षाणि वत्स्यामि इति । अत्र एव देवलोकात् इमं भूलोकं पुनः आगतं अरिन्दमं शत्रुनाशनं अवाप्तास्त्रं गांडीवधन्वानं अर्जुनं द्रक्ष्यामः । इति उक्त्वा पांडवः धर्मराजः सर्वान् ब्राह्मणान् आमंत्रयत स्वसमीपं आमन्त्रितवान् ।

तत्पुरुष-समासाः ।

पर्वतराजा = पर्वतानां राजा । २ सुरासुरनिषेवितः = सुरासुरैः निषेवितः । ३ देवलोकः = देवानां लोकः ४ द्रुमषण्डाः = द्रुमाणां षण्डाः ।

द्विगु-समासः ।

१ पञ्चवर्षाणि—पञ्च च तानि वर्षाणि ।

द्वंद्व-समासौ ।

१ कोकिलषट्पदाः—कोकिलाश्च षट्पदाश्च ।

२ सुरासुराः—सुराश्च असुराश्च ।

बहुव्रीहि-समासाः ।

१ कृतोद्देशः-कृतः उद्देशः येन । २ अमिततेजाः-अमितं तेजः यस्य ।३ अवाप्तास्त्रः-अवाप्तानि अस्त्राणि येन । ४ शतपत्रं--शतानि पत्राणि यस्य । ५ सहस्रपत्रं-सहस्राणि पत्राणि यस्य ।

कर्मधारय-समासौ ।

१ मत्तकोकिलषटपदाः-मत्ताः च ते कोकिलषट्पदाः ।

२ नीलोत्पलं--नीलं च तत् उत्पलं च ।

पाठक इन समासोंका उत्तम अभ्यास करें । स्वयं इस प्रकार इन समासोंको खोलनेका यत्न करें । समास किस रीतिसे बनते हैं और किस रीतिसे खोले जाते हैं, इस बातका सूक्ष्म रीतिसे विचार करके पाठक इस समास-प्रकरणका अध्ययन करेंगे, तो उनको आगे जाकर कोई कठिनता नहीं होगी ।

पाठ १७

(१) एकशेषसमासः ।

कई समास ऐसे हैं कि जिनके शब्दोंमेंसे एकही शब्द अवशिष्ट रहता है । इसका नाम एकशेष समास है । इसके उदाहरण ये हैं—

१ हंसौ-(हंसी-च हंसश्च)-हंसी और हंस पक्षी ।

२ भ्रातरौ—(भ्राता च स्वसा च)-भाई और बहिन ।

३ पुत्रौ-(पुत्रश्च दुहिता च)-पुत्र और पुत्री ।

४ पितरौ—(माता च पिता च)-माता और पिता ।

इस प्रकारके प्रयोग संस्कृतमें बहुत आते हैं । संस्कृत पुस्तकें पढते पढते पाठक इसके साथ परिचित हो सकते हैं। ये समास बहुत सुगम हैं और इनमें किसी प्रकार भी कठिनता नहीं है ।

(२) अलुक्समासः ।

पाठकोंने यह ध्यानसे देखा होगा कि इस समयतक जितने समास दिये गये हैं उनमें समासके अंदरके विभक्ति-प्रत्यय का लोप हुआ है, जैसा ' सूर्यस्य किरणः ' इसके ' स्य ' प्रत्ययका लोप होकर ' सूर्यकिरणः' ऐसा समास बनता है। ऐसाही हरएक प्रकारके समासमें होता है, अर्थात् समास बननेके लिये बीचमें प्रत्ययोंका लोप होना आवश्यकही है।

परन्तु अब ऐसे समास दिये जाते हैं कि जिनके मध्यके प्रत्ययका लोप नहीं होता। इसके उदाहरण अब देखिये-

१ दिविजः (दिविः जात)-द्युलोकमें उत्पन्न।

२ युधिष्ठिरः- (युधि स्थिरः) —युद्धमें स्थिर।

३ शरदिजः-(शरदि जायते)-शरद् ऋतुमें उत्पन्न।

४ मातरिश्वः(मातरि श्वियते)-माताके अंदर रहता है।

५ जनुषान्धः-(जनुषा अन्धः)—जन्मसे अंध।

६ दूरादागतः-(दूरात् आगतः)-दूरसे आया।

यद्यपि इनके मध्यके विभक्तिप्रत्यय जैसेके वैसे रहते हैं, तथापि इनको समासही कहते हैं। पाठक इस समासकी इस विशेषताका स्मरण रखें। अब तद्धितवृत्तिका स्वरूप अगले पाठमें विशेष रीतिसे बनाते हैं।

संधि किये हुए वाक्य।

(१) रामस्तां रात्रीं भरद्वाजाश्रमे सुखमवसत्। सुखमवसद्भरद्वाजाश्रमे तां रात्रीं रामः। रामो भरद्वाजाश्रमेऽवसत्तां रात्रीं सुखम्।

(२) प्रातरुत्थाय महार्षिमाभिवाद्य तावग्रे जग्मतुः। अग्ने जग्मतुस्तावभिवाद्य महर्षिं प्रातरुत्थाय। उत्थाय प्रातरभिवाद्य महर्षिमग्रे तौ जग्मतुः।

(३) लक्ष्मणः सीतायाः सुखमासनं चकार। चकार सुखमासनं सीताया रामः।

पाठ १८

तद्धितवृत्तिः ।

इसको वास्तविक रीतिसे तद्धित प्रत्ययान्त शब्दही कहना योग्य है । और इसीलिए इनकी गणना पूर्वोक्त मुख्य समासोंमें नहीं की जाती । गौण दृष्टिसेही इनको समास भी कहते हैं; इनके उदाहरण ये हैं-

१ गुणवान्-(गुणः अस्य अस्ति)-गुण जिसके पास है।
२ धनवान् —(धनं अस्य अस्ति) धन ,, ,, ,, ।
३ धनी — (,, ,, ,,) ,, ,, ,, ।
४ श्रद्धालुः —(श्रद्धा अस्य अस्ति) श्रद्धा ,, ,, ।
५ दाशरथिः —(दशरथस्य अपत्यं पुमान्)दशरथका पुत्र
६ आरुणिः(—(अरुणस्य ,, ,,) अरुणका ,,।
७ वैनेतयः —(विनतायाः ,, ,,) विनताका ,,।
८ पटुतरः —(अतिशयेन पटुः)—अति प्रवीण ।
९ यशस्वी —(यशः अस्य अस्ति) यश जिसका है।
१० तुंदिलः —(प्रशस्तं तुन्दं अस्य अस्ति) बडे पेटवाला।
११ पटुता —(पटोः भावः पटुता)—पटुत्व,प्रवीणता।
१२ शैत्यं —(शीतस्य भावः)—शीतता ।
१३ मार्दवं —(मृदोः भावः)—मृदुता ।
१४ कौशलं —(कुशलस्य भावः)—कुशलता ।

१५ नैपुण्यं – (निपुणस्य भावः) – निपुणता ।

इस प्रकारके तद्धितवृत्तिके सैकडों शब्द संस्कृतमें प्रयुक्त होते हैं, इसलिए इनका अभ्यास करना अत्यावश्यक है। इसी प्रकार ' उपपदवृत्ति ' के भी बहुत प्रयोग होते हैं।

उपपद-वृत्तिः ।

इसमें मूल शब्दके साथ क्रियाका रूप विशेष प्रकारसे बनकर लगता है जैसे –

१ धनदः – (धनं ददाति) – धन देनेवाला ।
२ जलदः – (जलं ददाति) – जल ,, ,, ।
३ जन्मदः – (जन्म ,,) – जन्म ,, ,, ।
४ भूपः – (भुवं पाति) – भूमिका पालनेवाला ।
५ भूपालः – (भुवं पालयति) – ,, ,, ।
६ कुंभकारः – (कुंभं करोति) – घडा बनानेवाला ।
७ शस्त्रकृत् – (शस्त्रं करोति) – शस्त्र बनानेवाला ।
८ वेदाध्यायी-(वेदं अधीते)-वेदका अध्ययन करनेवाला ।
९ भूभृत् (भुवं बिभर्ति)-भूमिका धारण पोषण करने वाला।

ये उपपद-वृत्तिके रूप संस्कृतमें सहस्रशः प्रयुक्त होते हैं, इसलिए इनका अभ्यास आवश्यक है। आगे इन रूपोंके वारंवार देखनेसे पाठक इनको पहचान सकनेकी योग्यता प्राप्त कर सकते हैं।

पाठ १९

(५) कृद्वृत्तिः ।

जिस प्रकार पूर्व स्थानमें "तद्धितवृत्ति' वाले शब्द दिये हैं, उसी प्रकार 'कृद्वृत्ति' वाले शब्द भी संस्कृतमें अनंत हैं, उनके कुछ उदाहरण यहां दिये जाते हैं-

१ कर्ता—(करोति इति) = करनेवाला ।
२ भर्ता—(बिभर्तीति) = भरणपोषण करनेवाला ।
३ हर्ता—(हरतीति) हरण करनेवाला ।
४ गच्छत्-(गच्छतीति) = जानेवाला ।
५ कुर्वन्-(करोतीति) = करनेवाला ।
६ पश्यन् -(पश्यतीति) - देखनेवाला ।
७ भोक्तव्यः -(भोक्तुं योग्यः) भोगने योग्य ।
८ कर्तव्यः -(कर्तुं योग्यः) = करने योग्य ।
९ दातव्यः -(दातुं योग्यः) = देनेयोग्य ।
१० जिगमिषा -(गन्तुं इच्छा) = जानेकी इच्छा ।
११ विवक्षा -(वक्तुं इच्छा) - बोलनेकी ,, ।
१२ पिपासा -(पातुं इच्छा) = पीनेकी ,, ।
१३ बुभुक्षा -(भोक्तुं इच्छा) - भोगनेकी ,, ।
१४ अलंकरिष्णुः -(अलंकर्तुं इच्छुः) - अलंकार पहननेकी इच्छा करनेवाला ।

१५ देयम् — (दातुं योग्यं) देनेयोग्य ।
१६ लेख्यम् — (लिखितुं योग्यं) — लिखनेयोग्य ।
१७ गतवान् — (अगमत् इति) — गया हुआ ।
१८ भृत्यः — (भर्तुं योग्यः) — भरण करनेयोग्य ।
१९ स्तुत्यः — (स्तोतुं ,,) — स्तुति करनेयोग्य ।
२० सुकरः (सुखेन कर्तुं योग्यः) — सुखसे करनेयोग्य ।
२१ दुर्लभः (दुःखेन लब्धुं,,)-दुःखसे प्राप्त करनेयोग्य।
२२ दुर्दानं — (,, दातुं योग्यं) — दुःखसे देनेयोग्य ।
२३ ग्राही — (गृह्णातीति ग्राही) — जो ग्रहण करता है।
२४ तितीर्षुः — (तर्तुं इच्छुः)—पार जानेकी इच्छावाला।
२५ चिकीर्षुः — (कर्तुं इच्छुः)-करनेकी इच्छावाला ।
पाठक इस प्रकार इन रूपोंका विचार समझ लें ।

वैशम्पायन उवाच ।

ततो रजन्यां व्युष्टायां धर्मराजं युधिष्ठिरम् ।
भ्रातृभिः सहितः सर्वैरवन्दत धनंजयः ॥ १ ॥

(म. भारत वन. अ. ११६)

‘ ततः तत्पश्चात्, रजन्यां व्युष्टायां रात्र्यां गतायां, सर्वैः निखिलैः भ्रातृभिः बंधुभिः सहितः धनंजयः विजयः अर्जुनः युधिष्ठिरं धर्मराजं, अवन्दत वंदनं कृतवान् ।’

पाठ २०

एतस्मिन्नेव काले तु सर्ववादित्रनिःस्वनः ।
बभूव तुमुलः शब्दस्त्वंतरिक्षे दिवौकसाम् ॥ २ ॥

'एतस्मिन् एव काले अस्मिन् एव समये, तु अन्तरिक्षे दिवौकसां देवतानां सर्ववादित्रनिःस्वनः सर्वेषां वादित्राणां महान् तुमुलः शब्दः बभूव, अभवत् ।'

रथनेमिस्वनश्चैव घण्टाशब्दश्च भारत ।
पृथग्व्यालमृगाणां च पक्षिणामिव सर्वशः ॥ ३ ॥

'हे भारत ! रथनेमिस्वनः रथस्य नाभिशब्दः चैव, तथाऽत्र घण्टाशब्दः च, घण्टानां शब्दः च, व्यालमृगाणां व्याघ्रमृगादीनां पक्षिणां इव च शब्दः सर्वशः बभूव ।'

संस्कृत--वाचन-पाठः ।

चित्रकूटे भरतागमनम् ।

तत् श्रुत्वा रामः विहसन् लक्ष्मणं आह, न अहं भरतं तथा मन्ये, यथा त्वं स्वचेतसि कल्पयसि । नूनं सः प्रजाजनैः अनुगम्यमानः दर्शनेप्सया एव समायातो भविष्यति । एवं वदत एव रामस्य भरतः अश्रुपूर्णेक्षणः पादौ जग्राह, न च शशाक वक्तुम् । रामः तु अनुजं सादरं उत्थाप्य आलिलिङ्ग, अपृच्छच्च

*

कुशलं तातस्य । सकलं अपि वृत्तान्तं भरतात् निशम्य रामः मुहूर्तं विललाप । ततः रामः वारंवारं कृताग्रहोऽपि पितुः आज्ञाभङ्गकातरः न मेने प्रत्यावर्तनाय । भरतं च प्राह—'हे भरत ! त्वं मदीये पादुके गृहीत्वा व्रज । निखिलनिशङ्काः परित्यज्य जनौघैः च पूज्यमानः भूत्वा अस्मन्मतेन सकलभुवनराज्यं कारय । '

भाषा-वाक्य ।

चित्रकूटमें भरतका आना ।

यह सुनकर राम हंसता हुआ लक्ष्मणको बोला—'मैं भरतको वैसा नहीं समझता हूं, जैसा तु अपने चित्तमें कल्पना कर रहा है । निश्चयसे वह प्रजाजनोंके साथ देखनेकी इच्छासेही आया होगा ।' इस प्रकार बोलते हुएही रामके पैरोंको आंसुओंसे भरी हुई आंखोंवाले भरतने पकड लिया और बोल न सका । रामने भाईको आदरसहित उठाकर उसका आलिङ्गन किया और पिताकी कुशल पूछी । भरतसे सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर थोडी देर बिलाप करने लगा । उसके बाद बारबार आग्रह करनेपर भी पिताकी आज्ञाके भंगसे डरा हुआ राम लौटनेके लिए न माना । और भरतको बोला कि—'हे भरत ! मेरी खडाऊं लेकर जा । सब शंकाओंको छोडकर समुदायसे पूजित हुआ हमारे मतसे सारे भुवनका राज्य कर ।'

पाठ २१

संस्कृत-वाचन-पाठः ।

वैदेहीहरणम् ।

हे वरानने, यत्र काकुत्स्थः तत्र गच्छामि । ते स्वस्ति अस्तु । त्वां समग्राः वनदेवताः रक्षन्तु । घोराणि निमित्तानि प्रादुर्भवन्ति । इत्येवं अभिधाय सीतया परुषं उक्तः कुपितः राघवानुजः न चिरात् एव रामं प्रति प्रतस्थे । तदा अवसरं आसाद्य अन्तरं आस्थितः परिव्राजकरूपधृक् श्लक्ष्णकाषायसंवीतः शिखी, छत्री, उपानही वामे अंसे शुभे यष्टिकमण्डलू अव-

---

भाषा-वाक्य

'हे सुन्दर मुखवाली !जहां राम है वहां जा रहा हूं । तेरा कल्याण हो । तेरी सब वनदेवता रक्षा करें । घोर अपशकुन उत्पन्न हो रहे हैं ।' इस प्रकार कहकर सीतासे कठोर वचनोंके कहे जानेसे कुपित हुआ हुआ रामका छोटा भाई जल्दीहीसे रामकी तरफ चल पडा । तब मौका पाकर छिपा हुआ संन्यासीके रूपको धारण किया हुआ, चिकने गेरुए वस्त्रोंसे युक्त, शीखाधारी, छत्रधारी, जूते पहिने हुए, बाए कंधेपर शुभ

सज्य दशग्रीवः सूर्यचन्द्राभ्यां रहितां संध्यां इव महत्तमः क्षिप्रं वैदेहीं अभिचक्राम । तं उग्रं पापकर्माणं संदृश्य जनस्थानगताः द्रुमाः न प्रकम्पन्ते स्म, न च मारुतः प्रवाति स्म । शीघ्रस्रोता अपि गोदावरी नदी रक्तलोचनं तं दृष्ट्वा भयात् स्तिमितं गन्तुं आरेभे । तृणैः आवृतः कूपः इव सहसा वैदेहीं दृष्ट्वा स भव्यरूपेण अतिष्ठत् । तदा जिहीर्षुणा रावणेन 'राक्षसानां अयं वासः कथं त्वं इह आगता' इति एवं वैदेही पृष्टा ।

लाठी और कमण्डलु रखे हुए दशग्रीव, मानो सूर्य—चन्द्रसे रहित संध्याकी तरह अत्यन्त अंधकारसे युक्त जल्दीसे वैदेही-के पास आया । उस उग्र पापकर्म करनेवालेको देखकर जनस्थानमें स्थित वृक्ष हिलने बंद हो गए और हवा भी बहती बन्द हो गई । तेज बहनेवाली गोदावरी नदीने भी लाल आंखोंवाले उसको देखकर भयके मारे चुप करके बहना प्रारंभ किया । तिनकोंसे अर्थात् घाससे ढके हुए कूएंकी तरह उसने एकदम वैदहीको देखकर भव्यरूप बना लिया । तब हरनेकी इच्छावाले रावणने 'यहां राक्षसोंके रहनेका स्थान है, तू यहां कैसे आगई ?' इस प्रकार वैदेहीको पूछा ।

—:०:—

पाठ २२

संस्कृत--पाठः ।

तदा आत्मानं परिव्राजकं शंसन्तं रावणं जानकी उवाच-" आगमिष्यति मे भर्ता वन्यं पुष्पफलादिकं पुष्कलं आदाय अधुना एव । त्वं च नाम च गोत्रं च कुलं च आत्मनः आचक्ष्व तत्त्वतः । किमर्थं एकः एव दण्डकारण्ये चरसि ?' एवं ब्रुवत्यां सीतायां राक्षसाधिपः रावण तीव्रं उत्तरं प्रत्युवाच । ' हे सीते, येन सदेवासुरमानुषाः लोकाः वित्रासिताः सः अहं रावणः रक्षोगणेश्वरः अस्मि । समुद्रस्य मध्ये

भाषा-वाक्य ।

तब अपने आपको संन्यासी बताते हुए रावणको जानकी बोली--' मेरा स्वामी अभीही बहुतसे वन्य फल-फूल आदि लेकर आयेगा । तू अपने नाम, गोत्र और कुलको ठीक ठीक कह । अकेलाही दण्डकारण्यमें क्यों विचरण कर रहा है ?' इस प्रकार सीताके कहनेपर राक्षसोंके राजा रावणने तीव्र उत्तर दिया-'हे सीता ! जिसने देव, असुर तथा मनुष्योंके सहित लोकोंको डरा रखा है, वह मैं राक्षसोंके समूहका स्वामी रावण हूं । समुद्रके बीचमें लंका नामवाली

लङ्का नाम मम महापुरी, या सागरेण परिक्षिप्ता, गिरिमूर्धनि निविष्टा अस्ति। तत्र सीते, मया सार्धं वनेषु विचरिष्यसि। ' एवं रावणेन उक्ता कुपिता जनकात्मजा राक्षसं तं अनादृत्य प्रत्युवाच। ' त्वं जम्बुकः दुर्लभां मां सिंहीं इच्छसि ? आदित्यस्य प्रभा इव न अहं त्वया स्प्रष्टुं शक्या। क्षुधितस्य सिंहस्य आशीविषस्य च वदनात् दंष्ट्रां आदातुं इच्छसि ? कालकूटं विषं पीत्वा स्वस्तिमान् जीवितुं इच्छसि ? शिलां कण्ठे अवसज्य समुद्रं तर्तुं इच्छसि ? सूर्यचन्द्रमसौ उभौ पाणिभ्यां हर्तुं इच्छसि ? ' प्रतापवान्

बडी नगरी है। समुद्र जिसकी परिखा है, और जो पर्वतके शिखरपर स्थित है। वहांपर सीता ! तू मेरे साथ वनोंमें विचरण करना।' इस प्रकार रावणसे कही गई कुपित जनककी पुत्री उस राक्षसका अनादर करके सामने बोली। ' तू स्यार ! दुःखसे प्राप्त होनेयोग्य मुझ सिंहीकी इच्छा करता है ? सूर्यके तेजकी तरह मैं तेरेसे छुई नहीं जा सकती। भूखे सिंहके तथा सर्पके मुंहसे दाढ उखाडना चाहता है ? कालकूट जहरको पीकर कल्याणपूर्वक जीना चाहता है ! गलेमें शिला बांधकर समुद्र तैरनेकी इच्छा करता है ? सूर्य और चन्द्रमाको दोनों हाथोंसे हरना चाहता है ?' प्रतापवाले दशग्रीवने सीताके

दशग्रीवः सीतायाः वचनं निशम्य सुमहद्वपुः चकार ; पुनः च वाक्यकोविदः सः मैथिलीं वाक्यं बभाषे । ' अम्बरे स्थितः अहं मेदिनीं भुजाभ्यां उद्वहेयम् । सुमुद्रं आपिबेयम् । रणे स्थितः मृत्युं हन्याम् । तीक्ष्णैः शरैः अर्कं तुद्याम् । महीतलं अपि बिभिन्द्याम् । ' एवं उक्तवतः तस्य क्रुद्धस्य रावणस्य नेत्रे रक्ते बभूवतुः । ततः सद्यः सौम्यं रूपं परित्यज्य स रावणः कालरूपाभं स्वं तीक्ष्णं रूपं भेजे । क्रोधेन संरक्तनयनः काममोहितः सुदुष्टात्मा राक्षसः सीतां अभिगम्य बुधः खे रोहिणीं इव जग्राह ।

बचनको सुनकरके बहुत बडा शरीर कर लिया । और फिर वाक्य बोलनेमें पंडित वह मैथिलीको वचन कहने लगा । ' आकाशमें खडा होकर मैं बाहुओंसे पृथिवीको उठा सकता हूं । समुद्रको पी सकता हूं । लडाईमें मृत्युको मार सकता हूं । तेज बाणोंसे सूर्यको भी व्यथित कर सकता हूं । पृथिवीको भी छेद सकता हूं । ' इस प्रकार कहते हुए उसकी आंखें लाल हो गईं । तब शीघ्रही शान्त रूपका त्याग करके वह रावण कालके रूपके सदृश अपने तीक्ष्ण रूपको प्राप्त हुआ । क्रोधसे लाल आंखोंवाले, कामसे मोहित अत्यन्त दुष्टात्मा उस राक्षसने पास जाकर आकाशमें बुध जिस प्रकार रोहिणीको पकडता है, उस प्रकार सीताको पकड लिया ।

पाठ २३

संस्कृत-पाठः ।

रामे दूरं गते वने सा दुःखार्ता रावणेन गृहीता राम रामेति अतिचुक्रोश । ततः सा आतुरा भ्रान्त-चित्ता मत्ता इव राक्षसेन्द्रेण विहायसा ह्रियमाणा ' हा लक्ष्मण, महाबाहो, गुरुचित्तप्रसादक ! रक्षसा ह्रियमाणां न जानीषे ? ' इत्येवं भृशं चुक्रोश । हे राघव, जीवितं सुखं अर्थं च धर्महेतोः परित्यजन् अधर्मेण ह्रियमाणां मां किं न पश्यसि ? हे परन्तप ! ननु त्वं अविनीतानां विनेतासि, तस्मात् एवं विधं पापं रावणं शाधि ।

भाषा-वाक्य ।

रामके वनमें दूर चले जानेपर रावणसे पकडी हुई वह दुःखिता सीता ' राम ! राम ! इस प्रकार बहुत चिल्लाने लगी । तब वह दुःखिता, घबराई हुईसी राक्षसोंके स्वामीद्वारा आकाशसे हरण की जाती हुई, 'हा लक्ष्मण, महाबलशाली, बडोंके चित्तको प्रसन्न करनेवाले, राक्षससे हरी जाती हुई, मुझे क्या नहीं जानता ? ' इस प्रकार बहुत चिल्लाई । ' हे राम ! ' जीवन, सुख और अर्थ, धर्मके कारण छोडता हुआ अधर्मसे हरण की जाती हुई मुझे क्या नहीं देखता ? हे शत्रुओंको तपानेवाले ! निश्चयसे तू अविनीतोंका नमानेवाला है, अतः इस प्रकारके पापी रावणका शासन कर ।

हन्त इदानीं बान्धवैः सह कैकेयी सकामा संजाता । इत्येवं सकरुणं विलपन्तीं सुदुःखितां सीतां दुष्टात्मा स राक्षसेन्द्रः हठात् रथं आरोप्य लङ्कां स्वराजधानीं आकाशमार्गेण प्रययौ ।

'हाय ! अब बान्धवोंके सहित कैकेयीकी इच्छा पूरी हुई।' इस प्रकार करुणापूर्वक रुदन करती हुई अत्यन्त दुःखित सीताको दुष्ट आत्मा राक्षसोंका राजा रावण हठपूर्वक रथपर चढाकर अपनी राजधानी लंकाको आकाश-मार्गसे चल पडा ।

शब्दाः ।

पलित—बुढापेमें उत्पन्न सफेद बाल ।

कर्णाभरणं— कानका आभूषण (जेवर) ।

प्रतिध्वनिः-बोले हुए शब्द वा आवाजकी वैसी गूंज ।

उद्दामदर्प— अत्यन्त अभिमान ।

विवरं— छेद ।

अवधीरयन्तः-- अवहेलना करते हुए, निन्दा करते हुए; परवाह न करते हुए ।

राजप्रकृतिः—राजस्वभाव ।

अलीक–झूठा ।

मोहनशक्तिः-मोहनेकी शक्ति, मूर्च्छित कर देनेकी शक्ति ।

नैष्ठुर्यं-- कठोरता ।

पाठ २४

संस्कृत-पाठः ।

शुकनासस्य उपदेशः ।

तात चन्द्रापीड ! त्वया विदितं वेदितव्यं, अधीतानि सर्वशास्त्राणि, अतः ते न अल्पं अपि उपदेष्टव्यं अस्ति । तथापि निसर्गतः एव भानुना अभेद्यं, रत्नालोकैः अच्छेद्यं, प्रदीपप्रभया अनपनेयं, यौवनप्रभवं अतिगहनं तमः भवति । दारुणः अयं लक्ष्मीमदः विवेकिनं अपि पुरुषं अविवेकी करोति । ऐश्वर्यतिमिरं चक्षुष्मन्तं अपि गताक्षत्वं विदधाति । दर्पदाहज्वरस्य

भाषा-वाक्य ।

शुकनासका उपदेश ।

प्रिय चन्द्रापीड ! तूने जाननेलायक जान लिया है, सब शास्त्र पढे हैं, इसलिए तेरे लिये कुछ भी उपदेश देनेलायक नहीं है । तो भी स्वभावसेही सूर्यसे अभेद्य, रत्नोंके प्रकाशसे अच्छेद्य, दीएके प्रकाशसे दूर किया जा सकनेवाला, युवावस्थासे उत्पन्न अन्धकार बडा गाढ होता है । यह धनका मद भयंकर है, विवेकी पुरुषको भी विवेकरहित बना डालता है । ऐश्वर्यरूपी अंधकार आंखोंवालेको भी अंधा बना देता है ।

उष्मा पटीरप्रभृतिभिः शिशिरैः अपि उपचारैः न उपशाम्यति । विषयविषस्य सततं आस्वादेन उत्पन्नः विषमः मोहः मणिमन्त्रौषधादिभिः विषोत्तारणसाधनैः अपि अगम्यः भवति । नित्यं स्नानशौचसंध्यावन्दनादिभिः रागमलस्य अवलेपः अपनेतुं शक्यते । अजस्रं घोरा राज्यसुखसंनिपातानिद्रा क्षपावसाने अपि अप्रबोधा भवति । गर्भेश्वरत्वं, अभिनवयौवनत्वं, अप्रतिमरूपत्वं, अमानुषशक्तित्वं च इति इयं महती खलु अनर्थपरंपरा सर्वा ।

अभिमानरूपी दाहज्वरकी गरमी चन्दन आदि ठण्डे उपचारोंसे भी शान्त नहीं होती। विषयरूपी विषका निरन्तर स्वाद लेते रहनेसे उत्पन्न हुआ हुआ भयानक मोह-(मूर्च्छा) मणिमन्त्र तथा औषधि आदि विषके उतारनेके साधनोंसे भी दूर नहीं किया जा सकता । रोज स्नान, शुद्धि, संध्यावन्दन आदिसे राग (विषयप्रेम) रूपी चढा हुआ मैल दूर किया जा सकता है । निरन्तर राज्यसुखरूपी संनिपात (रोगविशेष) से आई हुई घोर निद्रा रात्रिके समाप्त हो जानेपर भी नहीं खुलती । जन्मसेही ऐश्वर्यशाली होना, नई जवानी, असाधारण रूप, अत्यन्तशक्तिशालिता, ये सब बडी भारी अनर्थकी परंपरा है ।

पाठ २५

एषां एकं एकं अपि अविनयानां आयतनं अनर्थाय, किमुत समवायः? तथा च उक्तं अस्ति—

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वं अविवेकता ।
एकैकमप्यनर्थाय किं पुनस्तच्चतुष्टयम् ॥

यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्रजलप्रक्षालनेन निर्मला अपि कालुष्यं उपयाति मतिः । अनुज्झितधवलता अपि सरागा एव भवति यूनां दृष्टिः । अपहरति च वात्या इव शुष्कं पत्रं आत्मेच्छया प्रकृतिः पुरुषं यौवनसमये । स्वसाम्राज्ये इन्द्रियहरिणानां हारिणी

भाषा-वाक्य ।

अविनयोंके लिए इनमेंसे एक एक भी अनर्थका घर है फिर जहां सबके सब हों, उसका तो कहना ही क्या? और वैसे कहा भी है—

युवावस्था, धनसम्पत्ति, स्वामित्व और अविवेकता इनमेंसे एक एक भी अनर्थका कारण है, फिर यदि वे कहीं चारोंही जमा हो जाएं तो कहनाही क्या?

युवावस्थाके प्रारंभमें बहुत करके शास्त्ररूपी जलसे धोकर मलरहित की हुई भी बुद्धि मैली हो जाती है। जवानोंकी दृष्टि सफेदीको न छोडती हुई भी रागयुक्त हो जाती है। युवावस्थाके समयमें प्रकृति पुरुषको अपने साम्राज्यमें उडा ले जाती है, जिस

इयं विषयमृगतृष्णिका सततं दुरन्ता भवति । नव यौवने सलिलानि इव विषयस्वरूपाणि आस्वाद्यमानानि मनसः मधुरतराणि आपतन्ति । दिङ्मोह इव उन्मार्गप्रवर्तकः विषयेषु अत्यासङ्गः पुरुषं नाशयति । भवादृशा एव भवन्ति भाजनानि उपदेशानाम् । अपगतमले हि मनसि स्फटिकमणौ रजनिकरस्य करनिकराणि इव सुखेन विशन्ति उपदेशाः । अमलं अपि गुरुवचनं स्वच्छसलिलं इव अभव्यस्य श्रवणस्थितं महत् शूलं उपजनयति । इतरस्य तु मलिनं अन्धकारं

प्रकार कि वायु सूखे हुए पत्तोंको उडा ले जाती है । इंद्रियरूपी हरिणियोंको हरनेवाली यह विषय (सांसारिक भोगविलास) रूपी मृगतृष्णिका सदा कठिनाईसे अन्त होनेवाली होती है । जलोंकी तरह नई जवानीमें विषयस्वरूपोंको चखनेसे मनको मीठे मीठेसे प्रतीत होते हैं । विषयोंमें अधिक आसक्ति दिशाभ्रमकी तरह उलटे मार्गमें पुरुषको ले जाकर नष्ट कर देती है । आप जैसे ही उपदेशोंके योग्य होते हैं। मैलरहित स्फटिकमणिमें चन्द्रमाकी किरणोंकी तरह विषयमलसे रहित चित्तमें उपदेश सुखसे प्रवेश करते हैं। जिस प्रकार स्वच्छ जल भी कानमें जानेपर पीडा पैदा करता है, उसी प्रकार शुद्ध भी गुरुवचन असाधु पुरुषके कानमें जानेपर उसे दुःखदायी होता

प्रदोषसमयनिशाकर इव गुरूपदेशः सकलं अपि दोषजातं अपहरति । अयमेव च अनास्वादितविषय-रसस्य ते उपदेशकालः । दुष्प्रकृतेः श्रुतं शास्त्रं अपि अविनयस्य एव कारणं भवति । चन्दनप्रभवः न दहति किं अनलः ?

है, परन्तु जैसे रात्रिके समयका चन्द्रमा मैले अंधकारको दूर करता है वैसे दूसरेके (साधु पुरुषके) सारे दोषोंको गुरुका उपदेश दूर करता है । और जिसने विषयभोगको नहीं चखा है, ऐसे तेरे लिये यही उपदेशका समय है । दुष्ट स्वभाव-वालेका सुना हुआ शास्त्र भी अविनयकाही कारण होता है । क्या चन्दनसे उत्पन्न हुई आग नहीं जलाती ?

शब्दाः ।

वात्या-- आंधी, जोरकी हवा, वायुओंका समूह । दुरन्ता--दुःखसे जिसका अन्त हो अर्थात् जिसका अन्त होना कठिन है । दिङ्मोहः--दिशाओंका भ्रम, दिशाओंके विषयमें संदेह । उन्मार्गप्रवर्तकः-- उलटे रास्तेपर चलानेवाला । अत्यासङ्गः-- अत्यन्त आसक्ति । विषयः-- सांसारिक सुख-भोग । भाजनं--पात्र, योग्य । रजनिकरः-चन्द्रमा । करनिकरः-किरणोंका समूह । अभव्य-असाधु । प्रदोषः--रात्रि । दोषजातं--दोषसमूह । दुष्प्रकृतिः-दुष्ट स्वभाववाला । प्रक्षालनक्षमः-- धोनेमें समर्थ ।

वेद-प्रवेश

(मरुद्देवताका मन्त्रसंग्रह)

'वेदप्रवेश' परीक्षाकी पाठविधि, ५०० मन्त्रोंकी पढाई । इसमें भी उपर्युक्त प्रकार मंत्र, अन्वय, अर्थ, भावार्थ और टिप्पणी है । मू. ५) रु.डा.व्य. ॥।) रु.

आश्विनौ-देवताका मंत्रसंग्रह

इसमें भी मंत्र, पद, अन्वय, अर्थ, भावार्थ और टिप्पणी आदि हैं । इसमें ६८९ मंत्र हैं । मूल्य ५) रु. डा. व्य. १) रु.

वेदपरिचय

(भाग १-२-३)

'वेदपरिचय' परीक्षाके लिये ये पुस्तक तैयार किये हैं । ये ग्रन्थ इतने सुबोध, सुपाठ्य और आसान बनाये हैं कि इनसे अधिक सुबोध पाठविधि होही नहीं सकती । सर्वसाधारण स्त्रीपुरुष भी अपना थोडासा नियत समय इस कार्यके लिये प्रतिदिन देंगे, तो ४-५ वर्षोंमें वे वेदज्ञ हो सकते हैं। इन तीन भागोंमें ३०० वेद-मंत्र हैं ।

इनमें मंत्र, उसके पद, अन्वय, अर्थ, प्रत्येक पदका अर्थ, भावार्थ, मन्त्रका बोध, प्रत्येक पदके विशेष अर्थ, मन्त्रके पाठभेद, उनका अर्थ यह दिया है । प्रथम भाग मू. १॥); द्वितीय भाग मू. १॥); तृतीय भाग मू. २) रु.

वेदका स्वयं-शिक्षक, भाग १-२

जो पाठक प्रतिदिन आधा घंटा इसके अध्ययनके लिये देंगे, उनका प्रवेश वेदके मंदिरमें सुगमतासे हो सकता है । इसके दो भाग हैं । प्रत्येक भागका मू. १॥ रु. तथा डा. व्य. ।‑)